॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

॥ ऋग्वेद संहिता ॥

॥ ऋग्वेद॥

॥ अथ द्वितीय मण्डलं॥

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

विषय सूची

सूक्त १ 6

सूक्त २ 12

सूक्त ३ 17

सूक्त ४ 21

सूक्त ५ 25

सूक्त ४ 28

सूक्त ७ 31

सूक्त ८ 33

सूक्त ९ 35

सूक्त १० 38

सूक्त ११ 41

सूक्त १२ 48

सूक्त १३ 53

सूक्त १४ 58

सूक्त १५ 62

सूक्त १६ 66

सूक्त १७ 70

सूक्त १८ 74

सूक्त १९ 77

सूक्त २०..... 80
सूक्त २१..... 84
सूक्त २२..... 87
सूक्त २३..... 89
सूक्त २४ 96
सूक्त २५ 102
सूक्त २६ 104
सूक्त २७ 106
सूक्त २८ 112
सूक्त २९ 116
सूक्त ३०..... 119
सूक्त ३१..... 123
सूक्त ३२..... 126
सूक्त ३३..... 129
सूक्त ३४ 134
सूक्त ३५ 139
सूक्त ३६ 144
सूक्त ३७ 147
सूक्त ३८..... 150
सूक्त ३९..... 154

सूक्त ४०..... 157
सूक्त ४१..... 160
सूक्त ४२ 166
सूक्त ४३ 168

ऋग्वेद -द्वितीय मंडल

सूक्त १

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पञ्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता-अग्नि । छंद-जगती

त्वमग्ने द्युभिस्त्वमाशुशुक्षणिस्त्वमद्भ्यस्त्वमश्मनस्परि ।
त्वं वनेभ्यस्त्वमोषधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः ॥१॥

हे मनुष्यों के स्वामी अग्निदेव ! आप द्युलोक से प्रकट होकर शीघ्र प्रकाशित होने वाले तथा पवित्र हैं । आप बड़वाग्नि रूप में जल से, चिंगारी रूप में पाषाण घर्षण से, दावानल रूप में वनों से, तेजाबयुक्त ज्वलनशील रूप में ओषधियों से उत्पन्न होने वाले हैं॥१॥

तवाग्ने होत्रं तव पोत्रमृत्वियं तव नेष्ट्रं त्वमग्निदृतायतः ।
तव प्रशास्त्रं त्वमध्वरीयसि ब्रह्मा चासि गृहपतिश्च नो दमे ॥२॥

हे अग्ने ! यज्ञीय प्रक्रिया के संचालक ऋत्विजों में आप ही देव आवाहन कर्ता होता, पवित्रता बनाये रखने वाले पोता, सोमादि का वितरण करने वाले नेष्टा, अग्निकर्म के ज्ञाता आग्नीध हैं । आप ही यज्ञ की कामना करने वाले प्रशास्ता अर्थात प्रेरणा देने वाले, कर्मकाण्ड के

संचालक अध्वर्यु तथा निरीक्षक ब्रह्मा हैं । यजमान यज्ञकर्ता गृहपति भी आप ही हैं॥२॥

त्वमग्न इन्द्रो वृषभः सतामसि त्वं विष्णुरुरुगायो नमस्यः ।
त्वं ब्रह्मा रयिविद्ब्रह्मणस्पते त्वं विधर्तः सचसे पुरंध्या ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप सज्जनों को प्रभावशाली नेतृत्व प्रदान करने वाले इन्द्र हैं । आप ही सबके स्तुत्य सर्वव्यापी विष्णु हैं । हे ज्ञान सम्पन्न अग्निदेव ! आप उत्तम ऐश्वर्य से युक्त ब्रह्मा हैं, विविध प्रकार की बुद्धि को धारण करने के कारण आप मेधावी हैं॥३॥

त्वमग्ने राजा वरुणो धृतव्रतस्त्वं मित्रो भवसि दस्म ईड्यः ।
त्वमर्यमा सत्पतिर्यस्य सम्भुजं त्वमंशो विदथे देव भाजयुः ॥४॥

हे अग्निदेव ! आप व्रतों को धारण करने वाले राजा वरुण हैं । दुष्टनाशक तथा सबके स्तुत्य मित्र देवता हैं । सर्वव्यापी आप दान देने वाले सज्जनों के पालक अर्यमा हैं । आप ही सूर्य हैं । अत: हे अग्निदेव ! दिव्य गुणों से युक्त अभीष्ट फल हमें प्रदान करें॥४॥

त्वमग्ने त्वष्टा विधते सुवीर्यं तव ग्नावो मित्रमहः सजात्यम् ।
त्वमाशुहेमा ररिषे स्वश्व्यं त्वं नरां शर्धो असि पुरूवसुः ॥५॥

हे अग्निदेव ! साधकों के लिए आप श्रेष्ठ पराक्रम प्रदान करने वाले त्वष्टादेव हैं । सभी स्तुतियाँ आपके लिये हैं । आप हमारे मित्र और सजातीय (बन्धु हैं । आप शीघ्र ही उत्तम ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं । हे अग्निदेव ! आप मनुष्यों को आश्रय प्रदान करने वाले महान् बली हैं॥५॥

त्वमग्ने रुद्रो असुरो महो दिवस्त्वं शर्धो मारुतं पृक्ष ईशिषे ।
त्वं वातैररुणैर्यासि शंगयस्त्वं पूषा विधतः पासि नु त्मना ॥६॥

हे अग्निदेव ! आप द्युलोक के प्राणदाता रुद्र हैं । आप अन्नाधिपति तथा मरुतों के बल हैं । आप वायु के समान द्रुतगामी अश्व पर आरूढ़ होकर, कल्याण की कामना वाले गृहस्वामी के यहाँ जाते हैं । आप पोषणकर्ता पूषादेव हैं, अत: आप स्वयं ही मनुष्यों की रक्षा करते हैं॥६॥

त्वमग्ने द्रविणोदा अरंकृते त्वं देवः सविता रत्नधा असि ।
त्वं भगो नृपते वस्व ईशिषे त्वं पायुर्दमे यस्तेऽविधत् ॥७॥

हे अग्निदेव ! प्रज्वलित करने वाले को आप धन प्रदान करते हैं । आप रत्नों के धारणकर्ता सवितादेव हैं । हे प्रजापालक अग्निदेव ! आप ही धनाधिपति भग' देव हैं । जो अपने घर में आपको प्रज्वलित रखती हैं, उसकी आप रक्षा करें॥७॥

त्वामग्ने दम आ विश्पतिं विशस्त्वां राजानं सुविदत्रमृञ्जते ।
त्वं विश्वानि स्वनीक पत्यसे त्वं सहस्राणि शता दश प्रति ॥८॥

हे प्रजापालक अग्निदेव ! प्रजा अपने घरों में प्रकाशमान तथा ज्ञानयुक्त अग्नि के रूप में आपको प्राप्त करती है । हे सुन्दर ज्वालाओं से युक्त अग्निदेव ! आप सम्पूर्ण विश्व के स्वामी हैं तथा लाखों फल प्रदान करने वाले हैं॥८॥

त्वामग्ने पितरमिष्टिभिर्नरस्त्वां भ्रात्राय शम्या तनूरुचम् ।
त्वं पुत्रो भवसि यस्तेऽविधत्त्वं सखा सुशेवः पास्याधृषः ॥९॥

हे अग्निदेव ! आप मनुष्यों के पितर हैं, वे यज्ञों द्वारा आपको तृप्त करते हैं । आपका भ्रातृत्व प्राप्त करने के लिए वे शरीर को तेजस्वी बनाने वाले आपको कर्मों से प्रसन्न करते हैं । सेवा करने वालों के लिए आप पुत्र (तुष्टिकर) बन जाते हैं । आप मित्र, हितैषी तथा विघ्ननाशक बनकर हमारी रक्षा करें॥९॥

त्वमग्न ऋभुराके नमस्यस्त्वं वाजस्य क्षुमतो राय ईशिषे ।
त्वं वि भास्यनु दक्षि दावने त्वं विशिक्षुरसि यज्ञमातनिः ॥१०॥

हे अग्निदेव ! आपका अत्यन्त तेजस्वी स्वरूप भी समीप से स्तुति के योग्य है । आप प्रचुर अन्न आदि भोग्य सामग्री से युक्त बल के स्वामी हैं । आप काष्ठों को जलाकर प्रकाशित होते हैं । आप दान देने वालों के यज्ञ को पूर्ण करते हैं॥१०॥

त्वमग्ने अदितिर्देव दाशुषे त्वं होत्रा भारती वर्धसे गिरा ।
त्वमिळा शतहिमासि दक्षसे त्वं वृत्रहा वसुपते सरस्वती ॥११॥

हे अग्निदेव ! आप दान-दाताओं के लिए 'अदिति' हैं । वाणी रूपी स्तुतियों से विस्तृत होने के कारण 'होता' तथा 'भारती' हैं । सैकड़ों वर्ष की आयु प्रदान करने में समर्थ होने के कारण आप 'इळा' हैं । हे धनाधिपति अग्निदेव ! आप वृत्रहन्ता और 'सरस्वती' हैं॥११॥

त्वमग्ने सुभृत उत्तमं वयस्तव स्पार्हे वर्ण आ संदृशि श्रियः ।
त्वं वाजः प्रतरणो बृहन्नसि त्वं रयिर्बहुलो विश्वतस्पृथुः ॥१२॥

हे अग्निदेव ! आप सर्वश्रेष्ठ पोषक अन्न हैं । आपके द्वारा ही वरण करने योग्य तथा दर्शनीय ऐश्वर्य प्राप्त होता है । आप सदा बढ़ने वाले तथा महान् हैं । आप प्रचुर अन्न एवं ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं॥१२॥

त्वामग्न आदित्यास आस्यं त्वां जिह्वां शुचयश्चक्रिरे कवे ।
त्वां रातिषाचो अध्वरेषु सश्चिरे त्वे देवा हविरदन्त्याहुतम् ॥१३॥

हे दूरदर्शी अग्निदेव !आप आदित्यों के मुख हैं । पवित्र देवगणों के लिए आप जिह्वा रूप हैं । यज्ञ में दानशील देवगण आपका ही आश्रय प्राप्त करते हैं और आपको समर्पित की गई आहुतियों को ग्रहण करते हैं॥१३॥

त्वे अग्ने विश्वे अमृतासो अद्रुह आसा देवा हविरदन्त्याहुतम् ।
त्वया मर्तासः स्वदन्त आसुतिं त्वं गर्भो वीरुधां जज्ञिषे शुचिः ॥१४॥

हे अग्निदेव ! परस्पर द्रोह न करने वाले, अमरत्व प्राप्त सभी देवगण आपके मुख से ही हविष्यान्न ग्रहण करते हैं । आपका आश्रय प्राप्त करके ही मनुष्य अन्नादि को ग्रहण करते हैं । हे अग्निदेव ! आप वृक्ष-वनस्पतियों में ऊर्जा के रूप में विद्यमान रहकर अन्नादि को उत्पन्न करते हैं॥१४॥

त्वं तान्त्सं च प्रति चासि मज्मनाग्ने सुजात प्र च देव रिच्यसे ।
पृक्षो यदत्र महिना वि ते भुवदनु द्यावापृथिवी रोदसी उभे ॥१५॥

हे अग्निदेव ! आप अपनी शक्ति से देवगणों से संयुक्त एवं पृथक् होते हैं तथा अपने महान् गुणों के कारण ही देवगणों में सर्वश्रेष्ठ हैं ।

आपको जो कुछ भी अन्न समर्पित किया जाता है, उसे आप द्युलोक तथा पृथिवीं लोक के मध्य विस्तृत कर देते हैं॥१५॥

ये स्तोतृभ्यो गोअग्रामश्वपेशसमग्ने रातिमुपसृजन्ति सूरयः ।
अस्माञ्च ताँश्च प्र हि नेषि वस्य आ बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥१६॥

हे अग्निदेव ! जो ज्ञानीजन स्तोताओं को गाय तथा घोड़े आदि पशुओं का दान करते हैं, उन दानियों सहित हमें श्रेष्ठ (यज्ञ) स्थल पर शीघ्र ले चलें । हम वीर सन्तति से युक्त यज्ञ में उत्तम स्तुतियाँ करें॥१६॥

ऋग्वेद -द्वितीय मंडल

सूक्त २

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता-अग्नि । छंद-जगती

यज्ञेन वर्धत जातवेदसमग्निं यजध्वं हविषा तना गिरा ।
समिधानं सुप्रयसं स्वर्णरं द्युक्षं होतारं वृजनेषु धूर्षदम् ॥१॥

हे याज्ञिको ! समिधाओं से प्रज्वलित होने वाले, उत्पन्न पदार्थों के ज्ञाता, उत्तम अन्न सम्पदा से युक्त, सुखपूर्वक उद्देश्य तक पहुँचाने वाले, संग्राम में बल प्रदान करने वाले होता रूप अग्निदेव का विस्तार करो तथा हविष्यान्न समर्पित करके स्तुतियों द्वारा पूजन करो॥१॥

अभि त्वा नक्तीरुषसो ववाशिरेऽग्ने वत्सं न स्वसरेषु धेनवः ।
दिव इवेदरतिर्मानुषा युगा क्षपो भासि पुरुवार संयतः ॥२॥

हे अग्निदेव ! जिस तरह गौएँ अपने बछड़े की कामना करती हैं, उसी तरह दिन तथा रात्रि में हम आपको प्राप्त करने की इच्छा करते हैं । बहुतों के द्वारा वांछनीय आप भली प्रकार समर्थ होकर द्युलोक की तरह विस्तार पाते हैं । युगों-युगों से आप मनुष्य के पास विद्यमान हैं तथा दिन के समान रात्रि में भी प्रकाशित होते हैं॥२॥

तं देवा बुध्ने रजसः सुदंससं दिवस्पृथिव्योररतिं न्येरिरे ।
रथमिव वेद्यं शुक्रशोचिषमग्निं मित्रं न क्षितिषु प्रशंस्यम् ॥३॥

श्रेष्ठ कर्मा, द्युलोक और पृथिवी लोक में संव्याप्त, श्रेष्ठ ऐश्वर्य युक्त रथ वाले, तेजस्वी ज्वालाओं से युक्त, प्रजाओं में सर्वश्रेष्ठ मित्र के समान प्रशंसनीय, अग्निदेव को देवगण सभी लोकों में स्थापित करते हैं॥३॥

तमुक्षमाणं रजसि स्व आ दमे चन्द्रमिव सुरुचं ह्वार आ दधुः ।
पृश्न्याः पतरं चितयन्तमक्षभिः पाथो न पायुं जनसी उभे अनु ॥४॥

अन्तरिक्ष से वृष्टि कराने वाले, चन्द्रमा के समान उत्तम कान्तिमान्, पृथिवी पर सर्वत्र गमनशील, ज्वालाओं से दृष्टिगत होने वाले, द्युलोक और पृथ्वी लोक दोनों में सेतु के समान व्याप्त अग्निदेव को अपने घर में एकान्त (सुरक्षित स्थान पर लोग स्थापित करते हैं॥४॥

स होता विश्वं परि भूत्वध्वरं तमु हव्यैर्मनुष ऋञ्जते गिरा ।
हिरिशिप्रो वृधसानासु जर्भुरद्द्यौर्न स्तृभिश्चितयद्रोदसी अनु ॥५॥

वे अग्निदेव होता रूप में सम्पूर्ण यज्ञ स्थल को सभी ओर से संव्याप्त करते हैं । याजक गण उन्हें हविष्यान्न तथा स्तुतियों के द्वारा अलंकृत करते हैं । जिस तरह से आकाश नक्षत्रों से प्रकाशित होता है उसी प्रकार तेजस्वी ज्वालाओं से समिधाओं के बीच में बढ़ते हुए अग्निदेव द्यावा-पृथिवी को प्रकाशित करते हैं॥५॥

स नो रेवत्समिधानः स्वस्तये संददस्वान्रयिमस्मासु दीदिहि ।
आ नः कृणुष्व सुविताय रोदसी अग्ने हव्या मनुषो देव वीतये ॥६॥

हे अग्निदेव ! हमारे लिए कल्याणकारी ऐश्वर्य प्रदान करते हुए दीप्तिमान् हों । द्यावा-पृथिवी को हमें सुख प्रदान करने वाली बनाएँ और मनुष्यों द्वारा समर्पित किये गये हविष्यान्न को देवताओं तक पहुँचाएँ॥६॥

दा नो अग्ने बृहतो दाः सहस्रिणो दुरो न वाजं श्रुत्या अपा वृधि ।
प्राची द्यावापृथिवी ब्रह्मणा कृधि स्वर्ण शुक्रमुषसो वि दिद्युतः ॥७॥

हे अग्निदेव ! आप हमें हजारों तरह की विभूतियाँ प्रचुर मात्रा में प्रदान करें । कीर्तिदायीं अन्न प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त करें । उषायें आपको आदित्य के समान प्रकाशित करती हैं, अत: द्युलोक तथा पृथ्वी लोक को ज्ञान के सहारे हमारे अनुकूल बनाएँ॥७॥

स इधान उषसो राम्या अनु स्वर्ण दीदेदरुषेण भानुना ।
होत्राभिरग्निर्मनुषः स्वध्वरो राजा विशामतिथिश्चारुरायवे ॥८॥

उषा की समाप्ति के बाद प्रज्वलित अग्निदेव अपने उज्ज्वल तेज से प्रकाशित होते हैं । श्रेष्ठयाज्ञिक, प्रजाधिपति वे अग्निदेव मनुष्यों की स्तुतियों से प्रशंसित होते हुए प्रिय अतिथि की तरह पूज्य होते हैं॥८॥

एवा नो अग्ने अमृतेषु पूर्व्य धीष्पीपाय बृहद्दिवेषु मानुषा ।
दुहाना धेनुर्वृजनेषु कारवे त्मना शतिनं पुरुरूपमिषणि ॥९॥

हे अग्निदेव ! आप अत्यन्त तेजस्वी देवताओं में सर्वश्रेष्ठ हैं । मानव समुदाय के बीच में आप स्तुतियों से तृप्त होते हैं । याजकों को आप कामधेनु के समान असंख्य प्रकार का धन प्रदान करते हैं॥९॥

वयमग्ने अर्वता वा सुवीर्यं ब्रह्मणा वा चितयेमा जनाँ अति ।
अस्माकं द्युम्नमधि पञ्च कृष्टिषूच्चा स्वर्ण शुशुचीत दुष्टरम् ॥१०॥

हे अग्निदेव ! हम पराक्रम तथा ज्ञान के द्वारा सामर्थ्यशाली बनकर मानव समुदाय में श्रेष्ठ बनें । हमारा उच्च स्तरीय, अनन्त तथा दूसरों के लिए अप्राप्त धन समाज के पाँचों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा निषाद) वर्गों में सूर्य की तरह प्रकाशित हो॥१०॥

स नो बोधि सहस्य प्रशंस्यो यस्मिन्त्सुजाता इषयन्त सूरयः ।
यमग्ने यज्ञमुपयन्ति वाजिनो नित्ये तोके दीदिवांसं स्वे दमे ॥११॥

हे बलशाली अग्निदेव ! श्रेष्ठकुल में जन्म लेने वाले ज्ञानीजन यज्ञ में अन्न की कामना करते हैं तथा धन धान्य से सम्पन्न मनुष्य हमारी इच्छाओं को जानने वाले आपको प्रशंसनीय, पूजनीय तथा तेजस्वी रूप में अपने घरों में प्रज्वलित करते हैं॥११॥

उभयासो जातवेदः स्याम ते स्तोतारो अग्ने सूरयश्च शर्मणि ।
वस्वो रायः पुरुश्चन्द्रस्य भूयसः प्रजावतः स्वपत्यस्य शग्धि नः ॥१२॥

हे ज्ञानोत्पादक अग्निदेव ! ज्ञानी स्तोताओं सहित हम दोनों सुख की कामना से आपके आश्रित हों । आप हमारे लिए उत्तम सन्तति, रहने के योग्य गृह आदि तथा श्रेष्ठ सम्पत्ति प्रदान करें॥१२॥

ये स्तोतृभ्यो गोअग्रामश्वपेशसमग्ने रातिमुपसृजन्ति सूरयः ।
अस्माञ्च ताँश्च प्र हि नेषि वस्य आ बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥१३॥

हे अग्निदेव ! जो ज्ञानीजन स्तोताओं को श्रेष्ठ गौएँ तथा बलशाली घोड़ों से युक्त धन प्रदान करते हैं, आप उन्हें तथा हमें उत्तम ऐश्वर्य प्रदान करें । यज्ञों में वीर सन्तति से युक्त होकर हम आपकी स्तुति करें॥१३॥

सूक्त ३

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- आप्रीसूक्तं । छंद- त्रिष्टुप, ७ जगती

समिद्धो अग्निर्निहितः पृथिव्यां प्रत्यङ्विश्वानि भुवनान्यस्थात् ।
होता पावकः प्रदिवः सुमेधा देवो देवान्यजत्वग्निरर्हन् ॥१॥

प्रदीप्त अग्निदेव पृथ्वी पर स्थापित होकर समस्त लोकों में व्याप्त हैं । श्रेष्ठ बुद्धिवाले, पवित्र बनाने वाले, हविष्यान्न ग्रहण करने वाले तथा अत्यन्त तेजस्वी एवं पूज्य अग्निदेव देवों की पूजा करें॥१॥

नराशंसः प्रति धामान्यञ्जन्तिस्रो दिवः प्रति मह्ना स्वर्चिः ।
घृतप्रुषा मनसा हव्यमुन्दन्मूर्धन्यज्ञस्य समनक्तु देवान् ॥२॥

सबके द्वारा स्तुत्य ये अग्निदेव, पृथिवी, अन्तरिक्ष और आकाश तीनों लोकों को अपने महान् सामर्थ्य से प्रकाशित करते हुए, स्नेहयुक्त मन से हविष्यान्न को ग्रहण करते हुए यज्ञ स्थल में अपने दिव्य-प्रभाव को प्रकट करते हैं॥२॥

ईळितो अग्ने मनसा नो अर्हन्देवान्यक्षि मानुषात्पूर्वो अद्य ।
स आ वह मरुतां शर्धो अच्युतमिन्द्रं नरो बर्हिषदं यजध्वम् ॥३॥

हे पूज्य अग्निदेव ! हमारे हित साधन के लिए, हमारे पूजन को स्वीकार कर मनुष्यों से पूर्व ही आप श्रेष्ठ मन से देवों की पूजा करें । हे अग्निदेव ! सामर्थ्यवान् मरुतु देव तथा कभी भी परास्त न होने वाले इन्द्रदेव को हमारे पास लाये । हे मनुष्यो ! यज्ञ स्थल में स्थापित अग्निदेव की उपासना करो॥३॥

देव बर्हिर्वर्धमानं सुवीरं स्तीर्णं राये सुभरं वेद्यस्याम् ।
घृतेनाक्तं वसवः सीदतेदं विश्वे देवा आदित्या यज्ञियासः ॥४॥

हे कुशाओं में स्थित अग्निदेव! यज्ञ कुण्ड में बढ़ते हुए आप हमें वीर सन्तति तथा श्रेष्ठ धन प्रदान करें । हे वसुओ, आदित्यो तथा विश्वे-देवो ! घृत से सिंचित एवं फैलाए गये कुश पर आप स्थापित हों॥४॥

वि श्रयन्तामुर्विया हूयमाना द्वारो देवीः सुप्रायणा नमोभिः ।
व्यचस्वतीर्वि प्रथन्तामजुर्या वर्णं पुनाना यशसं सुवीरम् ॥५॥

नमस्कार पूर्वक आवाहित होने वाला, विस्तृत तथा सुखकर यह जो दिव्य द्वार (यज्ञाग्नि) है, मानव इसका सहारा ले (देवों के साथ आदान-प्रदान हेतु इसका उपयोग करें) और (देवों से सम्पर्क जोड़ने वाला-जीर्ण न होने वाला यह दिव्य द्वार श्रेष्ठ संतति एवं सुयश प्रदान करते हुए सतत विकासशील रहे ५॥

साध्वपांसि सनता न उक्षिते उषासानक्ता वय्येव रण्विते ।
तन्तुं ततं संवयन्ती समीची यज्ञस्य पेशः सुदुघे पयस्वती ॥६॥

यज्ञ के स्वरूप को सुन्दरता प्रदान करने वाली उषा और नक्ता देवियाँ वरणी (वस्त्र बुनने वाली) के समान शब्दायमान हो, हमारे उत्तम कर्मों को प्रेरणा देती हुई पूजित होती हैं । ये देवियाँ (काल विभाग रूपों) फैले धागों को बुनती हुईं (मनुष्य के जीवन-रूपी वस्त्र को) उत्तम प्रकार से गति करने योग्य बनाकर सभी प्रकार की कामनाओं को पूरा करते हुए अन्न और दुग्धादि से पूर्ण बनाती हैं॥६॥

दैव्या होतारा प्रथमा विदुष्टर ऋजु यक्षतः समृचा वपुष्टरा ।
देवान्यजन्तावृतुथा समञ्जतो नाभा पृथिव्या अधि सानुषु त्रिषु ॥७॥

दोनों दिव्य होता अग्रणी, विद्वान् तथा रूपवान् हैं । वे चाओं के माध्यम से सरलता पूर्वक देव यज्ञ सम्पन्न करते हैं । पृथ्वी की नाभि (यज्ञकुण्ड) में वे तीनों सवनों में भली प्रकार संयुक्त होते हैं॥७॥

सरस्वती साधयन्ती धियं न इळा देवी भारती विश्वतूर्तिः ।
तिस्रो देवीः स्वधया बर्हिरेदमच्छिद्रं पान्तु शरणं निषद्य ॥८॥

अनेक श्रेष्ठ गुणों से युक्त देवी इळा, देवी भारती तथा देवी सरस्वती ये तीनों देवियाँ हमारे इस यज्ञ स्थल पर विद्यमान रहकर अपनी धारणा शक्ति के द्वारा हमारे इस यज्ञ का संरक्षण करें॥८॥

पिशङ्गरूपः सुभरो वयोधाः श्रुष्टी वीरो जायते देवकामः ।
प्रजां त्वष्टा वि ष्यतु नाभिमस्मे अथा देवानामप्येतु पाथः ॥९॥

अग्निरूप त्वष्टा देव हमें श्रेष्ठ सन्तान प्रदान करें । वह पुत्र सुवर्ण जैसी कान्तिवाला, उत्तम हृष्ट-पुष्ट, अन्न तथा पराक्रम को धारण करने

वाला, दीर्घायु, वीर, श्रेष्ठ बुद्धिमान्, उत्तम गुणों की कामना करने वाला तथा देवों द्वारा प्रदर्शित उत्तम मार्ग का अनुगामी हो॥९॥

वनस्पतिरवसृजन्नुप स्थादग्निर्हविः सूदयाति प्र धीभिः ।
त्रिधा समक्तं नयतु प्रजानन्देवेभ्यो दैव्यः शमितोप हव्यम् ॥१०॥

वनस्पतियों से अपना प्रकाश फैलाते हुए अग्निदेव हमारे समीप स्थित हों । ये अग्निदेव अपनी शक्ति से हविष्यान्न का परिपाक करते हैं । दिव्य गुण सम्पन्न, शान्त स्वभाव वाले ये अग्निदेव तीन प्रकार से तैयार हविष्यान्न को देवों के पास पहुँचायें॥१०॥

घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतम्वस्य धाम ।
अनुष्वधमा वह मादयस्व स्वाहाकृतं वृषभ वक्षि हव्यम् ॥११॥

इन अग्निदेव का मूल आश्रय स्थल (तेज) घी है, अत: इन्हें घृत से सिंचित करते हैं । हे बलशाली अग्निदेव ! स्नेह पूर्वक समर्पित की गई आहुतियों (हविष्यान्न) को सभी देवों तक पहुँचाकर उन्हें प्रसन्न करें॥११॥

सूक्त ४

ऋषि:- सोमाहुतिभार्गव
देवता- अग्नि । छंद- त्रिष्टुप,

हुवे वः सुद्योत्मानं सुवृक्तिं विशामग्निमतिथिं सुप्रयसम् ।
मित्र इव यो दिधिषाय्यो भूद्देव आदेवे जने जातवेदाः ॥१॥

हे याजको ! दिव्य गुण सम्पन्न सभी उत्पन्न पदार्थों के ज्ञाता तथा मनुष्यों से लेकर देवों तक सूर्यदेव के समान सभी के आधार रूप जो अग्निदेव हैं, उन प्रकाशित, पापों को नष्ट करने वाले, अतिथि के समान पूज्य तथा सबको प्रसन्न करने वाले अग्निदेव को हम आवाहित करते हैं॥१॥

इमं विधन्तो अपां सधस्थे द्वितादधुर्भृगवो विक्ष्वायोः ।
एष विश्वान्यभ्यस्तु भूमा देवानामग्निररतिर्जीराश्वः ॥२॥

अग्नि – विद्या के ज्ञाताओं ने, इन अग्निदेव को विशेष उपायों से अन्तरिक्ष में जल के निवास स्थल (मेघों में तड़ित विद्युत् के रूप में) तथा मनुष्यों के बीच पृथ्वी पर (अग्नि के रूप में) इन दोनों स्थानों में स्थापित किया । समस्त ऐश्वर्यों के स्वामी, द्रुतगामी अश्वों वाले ये अग्निदेव सभी सामर्थ्यवान् शत्रुओं को पराजित करें॥२॥

अग्निं देवासो मानुषीषु विक्षु प्रियं धुः क्षेष्यन्तो न मित्रम् ।
स दीदयदुशतीरूर्म्या आ दक्षाय्यो यो दास्वते दम आ ॥३॥

जिस प्रकार यात्रा में जाने वाला मनुष्य अपने मित्र को घर की रखवाली के लिए नियुक्त करता है, उसी प्रकार प्रिय तथा हितकारी अग्निदेव को देवों ने मानवी प्रजा के मध्य स्थापित किया॥३॥

अस्य रण्वा स्वस्येव पुष्टिः संदृष्टिरस्य हियानस्य दक्षोः ।
वि यो भरिभ्रदोषधीषु जिह्वामत्यो न रथ्यो दोधवीति वारान् ॥४॥

जिस प्रकार अपने शरीर को स्वस्थता आनन्ददायी होती है, उसी प्रकार काष्ठादि को भस्म करके वृद्धि को प्राप्त हुए अग्निदेव की तेजस्विता भी सबके लिए रमणीय होती हैं । जिस तरह रथ में जुड़ा हुआ घोड़ा अपनी पूँछ के बालों को कँपाता है, उसी प्रकार वृक्ष वनस्पतियों को धारण करने वाले अग्निदेव की ज्वालायें दिखाई देती हैं॥४॥

आ यन्मे अभ्वं वनदः पनन्तोशिग्भ्यो नामिमीत वर्णम् ।
स चित्रेण चिकिते रंसु भासा जुजुर्वाँयो मुहुरा युवा भूत् ॥५॥

अग्निदेव की महानता का गान करने वाले तथा अग्निदेव की कामना करने वाले स्तोताजनों को अग्निदेव अपने जैसा ही तेज प्रदान करते हैं तथा हव्य समर्पित किए जाने पर अपने अति मनोहर स्वरूप को प्रदर्शित करते हुए वृद्ध (मन्द) होकर भी बार-बार तरुण (कान्तिमान् ज्वालाओं वाले) हो जाते हैं॥५॥

आ यो वना तातृषाणो न भाति वार्ण पथा रथ्येव स्वानीत् ।
कृष्णाध्वा तपू रण्वश्चिकेत द्यौरिव स्मयमानो नभोभिः ॥६॥

जैसे प्यासा व्यक्ति पानी पीता है, उसी प्रकार द्रुतगति से वनों को जलानेवाले अग्निदेव, रथ को वहन करने वाले घोड़े की भाँति शब्द करते हैं । वह 'कृष्ण धूम्र-मार्ग' से जाने वाले, सभी को ताप देने वाले, रमणीय अग्निदेव नक्षत्रों से प्रकाशित आकाश की तरह सुशोभित होते हैं॥६॥

स यो व्यस्थादभि दक्षदुर्वीं पशुर्नैति स्वयुरगोपाः ।
अग्निः शोचिष्माँ अतसान्युष्णन्कृष्णव्यथिरस्वदयन्न भूम ॥७॥

जो अग्निदेव विविध रूपों में विश्वव्यापी हैं, जो विशाल पृथिवी के पदार्थों को जलाते हैं, वे तेजस्वी अग्निदेव सभी व्यथाकारी, कण्टकों को, सूखे काष्ठों तथा वनस्पतियों को अपनी ज्वालाओं से जलाते हुए रक्षक रहित पशु के समान इधर-उधर स्वेच्छा से जाते हैं॥७॥

नू ते पूर्वस्यावसो अधीतौ तृतीये विदथे मन्म शंसि ।
अस्मे अग्ने संयद्वीरं बृहन्तं क्षुमन्तं वाजं स्वपत्यं रयिं दाः ॥८॥

हे अग्निदेव ! आपने पूर्व समय में भी हमारा संरक्षण किया है, अत: हम तीसरे सवन में भी मनोहारी स्तोत्रों का उच्चारण करके उसका स्मरण करते हैं । हे अग्निदेव आप हमें श्रेष्ठ धन तथा महान् कीर्तिमान् वीर सन्तति प्रदान करें॥८॥

त्वया यथा गृत्समदासो अग्ने गुहा वन्वन्त उपराँ अभि ष्युः ।
सुवीरासो अभिमातिषाहः स्मत्सूरिभ्यो गृणते तद्वयो धाः ॥९॥

हे अग्निदेव ! जिस तरह गुफा में बैठे हुए अहंकार रहित स्तुति करने वाले ऋषियों को उत्तम सन्तति प्रदान करके आपने संरक्षण प्रदान किया, उसी तरह हमारे द्वारा ज्ञान पूर्वक की गई स्तुतियों से हमें श्रेष्ठ धन देते हुए संरक्षण प्रदान करें॥९॥

सूक्त ५

ऋषिः- सोमाहुतिभार्गव
देवता- अग्नि । छंद- त्रिष्टुप,

होताजनिष्ट चेतनः पिता पितृभ्य ऊतये ।
प्रयक्षज्ञेन्यं वसु शकेम वाजिनो यमम् ॥१॥

शरीर में चेतना उत्पन्न करने वाले ये होता एवं पिता रूप अग्निदेव पितरों की रक्षा के लिए उत्पन्न हुए ये हमें भी बलशाली, पूजनीय, रक्षा साधन से सम्पन्न तथा विजय दिलाने योग्य धन प्रदान करने में समर्थ हों॥१॥

आ यस्मिन्त्सप्त रश्मयस्तता यज्ञस्य नेतरि ।
मनुष्वद्दैव्यमष्टमं पोता विश्वं तदिन्वति ॥२॥

यज्ञ के नायक रूप अग्निदेव में सात रश्मियाँ व्याप्त हैं । पवित्र बनाने वाले वे अग्निदेव मनुष्य की तरह यज्ञ के आठवें (दीर्घायु प्रदान करने वाले होकर) स्थान में पूर्ण रूप से व्याप्त होते हैं । ॥२॥

दधन्वे वा यदीमनु वोचद्ब्रह्माणि वेरु तत् ।
परि विश्वानि काव्या नेमिश्चक्रमिवाभवत् ॥३॥

अग्निदेव को लक्ष्य करके इस यज्ञ में मन्त्रोच्चारण के साथ जो हविष्यान्न समर्पित किया जाता है, उसे ये अग्निदेव जानते हैं । जिस तरह धुरी के चारों ओर चक्र घूमते हैं, उसी तरह सभी स्तुतियाँ इन अग्निदेव के चारों ओर घूमती हैं॥३॥

साकं हि शुचिना शुचिः प्रशास्ता क्रतुनाजनि ।
विद्वाँ अस्य व्रता ध्रुवा वया इवानु रोहते ॥४॥

उत्तम प्रकार से शासन करने वाले ये अग्निदेव शुद्ध करने वाले पवित्र कर्मों के साथ ही उत्पन्न हुए । जों (व्यक्ति) अग्निदेव के इस सनातन स्वरूप को जानता है, वह वृक्ष की शाखाओं के समान बराबर वृद्धि को प्राप्त होता है और क्रम से ऊँचे- ही -ऊँचे चढ़ता है॥४॥

ता अस्य वर्णमायुवो नेष्टुः सचन्त धेनवः ।
कुवित्तिसृभ्य आ वरं स्वसारो या इदं ययुः ॥५॥

नेता रूप अग्निदेव के तीनों रूपों को उत्तम प्रकार से तेजस्वी बनाने वाली, बहनों के समान परस्पर प्रेम करने वाली अँगुलियाँ प्रज्वलित करती हैं, ये अग्निदेव मनुष्यों को दुधारू गौ के समान सुखी बनाते हैं॥५॥

यदी मातुरुप स्वसा घृतं भरन्त्यस्थित ।
तासामध्वर्युरागतौ यवो वृष्टीव मोदते ॥६॥

जब माता रूपी वेदी के पास बहन रूपी अँगुलियाँ घृत भरकर (जुहूपात्र लेकर) जाती हैं, तब अध्वर्यु अग्निदेव के समीप अँगुलियों के

आने पर उसी प्रकार प्रसन्न होते हैं – जैसे वर्षा के जल को पाकर अन्न ॥६॥

स्वः स्वाय धायसे कृणुतामृत्विगृत्विजम् ।
स्तोमं यज्ञं चादरं वनेमा ररिमा वयम् ॥७॥

ये अग्निदेव श्रेष्ठ कार्यों के निमित्त सामर्थ्य प्रदान करने हेतु ऋत्विक् के समान हैं । हम उन ऋत्विक् रूप अग्निदेव के निमित्त स्तोत्रों का उच्चारण करते हुए हविष्यान्न समर्पित करते हुए यज्ञ करें॥७॥

यथा विद्वाँ अरं करद्विश्वेभ्यो यजतेभ्यः ।
अयमग्ने त्वे अपि यं यज्ञं चकृमा वयम् ॥८॥

हे अग्निदेव ! जिस प्रकार ज्ञानी जन भली-भाँति सभी देवों को संतुष्टि प्रदान करते हैं, उसी प्रकार हमारे द्वारा जो भी यज्ञीय कार्य सम्पन्न हों, वह आपकी तृप्ति के लिए ही हों॥८॥

सूक्त ४

ऋषि:- सोमाहुतिभार्गव
देवता- अग्नि: । छंद- गायत्री,

इमां मे अग्ने समिधमिमामुपसदं वनेः ।
इमा उ षु श्रुधी गिरः ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप हमारी इन समिधाओं तथा आहुत्तियों को स्वीकार करते हुए हमारे स्तोत्रों को भली-भाँति सुनें॥१॥

अया ते अग्ने विधेमोर्जो नपादश्वमिष्टे ।
एना सूक्तेन सुजात ॥२॥

हे शक्ति को क्षीण न करने वाले, द्रुतगामी, साधनों में गति प्रदान करने वाले, उत्तम ख्याति वाले अग्निदेव ! हमारी इस यज्ञ क्रिया तथा सूक्त से आप प्रसन्न हों॥२॥

तं त्वा गीर्भिर्गिर्वणसं द्रविणस्युं द्रविणोदः ।
सपर्येम सपर्यवः ॥३॥

हे ऐश्वर्यप्रदाता अग्निदेव ! आपकी प्रतिष्ठा चाहने वाले हम आपके स्तुत्य तथा धन प्रदान करने वाले स्वरूप की स्तुतियों के द्वारा पूजा करते हैं॥३॥

स बोधि सूरिर्मघवा वसुपते वसुदावन् ।
युयोध्यस्मद्द्वेषांसि ॥४॥

हे ऐश्वर्यप्रदाता धनाधिपति अग्निदेव ! आप ऐश्वर्यवान् तथा ज्ञानवान् होकर हमारी कामनाओं को जानते हुए द्वेष करने वाले हमारे शत्रुओं को हमसे दूर करें॥४॥

स नो वृष्टिं दिवस्परि स नो वाजमनर्वाणम् ।
स नः सहस्रिणीरिषः ॥५॥

अन्तरिक्ष से वे अग्निदेव हमारे लिए वृष्टि करें । वे हमें श्रेष्ठ बल तथा हजारों प्रकार का अन्न प्रदान करें॥५॥

ईळानायावस्यवे यविष्ठ दूत नो गिरा ।
यजिष्ठ होतरा गहि ॥६॥

बलशाली तथा अत्यन्त प्रशंसा के योग्य, दुष्टों को पीड़ित करने वाले, होतारूप हे अग्निदेव ! आपके संरक्षण की कामना से स्तोत्र रूप वाणियों से हम आपका पूजन करते हैं । अत: आप हमारे पास आयें॥६॥

अन्तर्ह्यग्न ईयसे विद्वाञ्जन्मोभया कवे ।
दूतो जन्येव मित्र्यः ॥७॥

हे मेधावान् अग्निदेव ! आप मनुष्यों के हृदयाकाश में विद्यमान रहकर उनके दोनों (वर्तमान तथा पिछले) जन्मों को जानते हैं । आप मित्रतुल्य सभी के हितकारी हैं॥७॥

स विद्वाँ आ च पिप्रयो यक्षि चिकित्व आनुषक् ।
आ चास्मिन्त्सत्सि बर्हिषि ॥८॥

हे अग्निदेव ! आप ज्ञानी हैं, अत: हमारी कामनाओं को पूर्ण करें । आप चैतन्यतायुक्त हैं, अत: हमारे हविष्यान्न को यथा क्रम से देवताओं तक पहुँचा कर हमारे इस यज्ञ में प्रतिष्ठित हों॥८॥

सूक्त ७

ऋषि:- सोमाहुतिभार्गव
देवता- अग्नि: । छंद- गायत्री,

श्रेष्ठं यविष्ठ भारताग्ने द्युमन्तमा भर ।
वसो पुरुस्पृहं रयिम् ॥१॥

हे अतीव बलशाली अग्निदेव ! आप सभी के पालक तथा सुख प्रदान करने वाले आश्रयदाता हैं, अत: महान् तेजस्वी तथा बहुतों द्वारा चाहा गया ऐश्वर्य हमें भरपूर मात्रा में प्रदान करें॥१॥

मा नो अरातिरीशत देवस्य मर्त्यस्य च ।
पर्षि तस्या उत द्विषः ॥२॥

हे अग्निदेव ! देवताओं तथा मनुष्यों के दुश्मन हमारे ऊपर स्वामित्व स्थापित न करें । अपितु आप उन शत्रुओं से हमें बचायें॥२॥

विश्वा उत त्वया वयं धारा उदन्या इव ।
अति गाहेमहि द्विषः ॥३॥

हे अग्निदेव ! जिस तरह जल की धारायें बड़ी चट्टानों को पार कर जाती हैं, उसी तरह आपका संरक्षण पाकर द्वेष करने वाले सम्पूर्ण शत्रुओं को हम पार कर जायें॥३॥

शुचिः पावक वन्द्योऽग्ने बृहद्वि रोचसे ।
त्वं घृतेभिराहुतः ॥४॥

हे पवित्रता प्रदान करने वाले अग्निदेव ! आप पवित्र तथा वन्दना के योग्य हैं । आप घृत की आहुतियों से अत्यन्त प्रकाशित होते हैं॥४॥

त्वं नो असि भारताग्ने वशाभिरुक्षभिः ।
अष्टापदीभिराहुतः ॥५॥

हे मनुष्यों के हितकारी अग्निदेव ! आप हमारी सुन्दर गौओं, बैलों तथा गर्भिणी गौओं द्वारा पूजित हैं॥५॥

द्रवन्नः सर्पिरासुतिः प्रत्नो होता वरेण्यः ।
सहसस्पुत्रो अद्भुतः ॥६॥

इन अग्निदेव का भोजन समिधा रूपी अन्न हैं, जिनमें घृत का सिंचन किया जाता है, जो सनातन तथा होता रूप में वरण के योग्य हैं । बल से उत्पन्न ऐसे अग्निदेव अद्भुत गुणों के कारण रमणीय हैं॥६॥

सूक्त ८

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- अग्निः । छंद- गायत्री,

वाजयन्निव नू रथान्योगाँ अग्नेरुप स्तुहि ।
यशस्तमस्य मीव्हुषः ॥१॥

हे मनुष्य ! जिस प्रकार धन-धान्य की कामनावाले रथों को उत्तम रीति से तैयार करते हैं, उसी प्रकार अत्यन्त यशस्वी, सबके लिए सुखकारी अग्निदेव की स्तुतियों के द्वारा उनका पूजन करो॥१॥

यः सुनीथो ददाशुषेऽजुर्यो जरयन्नरिम् ।
चारुप्रतीक आहुतः ॥२॥

जो अग्निदेव श्रेष्ठ नेतृत्व प्रदान कर उत्तम पथ पर ले जाते हैं, जो अविनाशी तथा श्रेष्ठ उपक्रम वाले हैं, ऐसे शत्रुनाशक, दानशील अग्निदेव को हम आवाहन करते हैं॥२॥

य उ श्रिया दमेष्वा दोषोषसि प्रशस्यते ।
यस्य व्रतं न मीयते ॥३॥

जो अग्निदेव घरों में अपनी कान्ति से युक्त होकर प्रतिष्ठित होते हैं, जो अग्निदेव दिन और रात प्रशंसा के योग्य हैं तथा जिनका व्रत कभी खण्डित नहीं होता; वे अग्निदेव पूज्य तथा प्रशंसनीय हैं॥३॥

आ यः स्वर्ण भानुना चित्रो विभात्यर्चिषा ।
अञ्जानो अजरैरभि ॥४॥

जिस तरह सूर्य से द्युलोक प्रकाशित होता है, उसी तरह वे अविनाशी, आश्चर्य कारक अग्निदेव अपनी ज्वालाओं को प्रकट करके सर्वत्र प्रकाशित होते हैं॥४॥

अत्रिमनु स्वराज्यमग्निमुक्थानि वावृधुः ।
विश्वा अधि श्रियो दधे ॥५॥

शत्रुनाशक तथा सुशोभित अग्निदेव स्तुतियों से अत्यन्त तेजोमय होकर समस्त ऐश्वर्यों को धारण करके शोभायमान होते हैं॥५॥

अग्नेरिन्द्रस्य सोमस्य देवानामूतिभिर्वयम् ।
अरिष्यन्तः सचेमह्यभि ष्याम पृतन्यतः ॥६॥

अग्नि, इन्द्र, सोम आदि अन्यान्य देवताओं के संरक्षण में हम भली – भाँति सुरक्षित हैं, अत: कभी भी नाश को न प्राप्त होते हुए हम शत्रुओं को पराजित करें॥६॥

सूक्त ९

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- अग्नि: । छंद- त्रिष्टुप,

नि होता होतृषदने विदानस्त्वेषो दीदिवाँ असदत्सुदक्षः ।
अदब्धव्रतप्रमतिर्वसिष्ठः सहस्रम्भरः शुचिजिह्वो अग्निः ॥१॥

ये अग्निदेव होता, मेधावी, प्रदीप्त, पोषक, बलशाली, तेजस्वी, उत्तम बल से युक्त, नियमों पर आरूढ़, आश्रय दाता, हजारों का भरण-पोषण करने में समर्थ तथा सत्यवक्ता हैं । ऐसे अग्निदेव होता के सदन में प्रतिष्ठित हों॥१॥

त्वं दूतस्त्वमु नः परस्पास्त्वं वस्य आ वृषभ प्रणेता ।
अग्ने तोकस्य नस्तने तनूनामप्रयुच्छन्दीद्यद्बोधि गोपाः ॥२॥

हे बलशाली अग्निदेव ! आप ही हमारे दूत तथा आप ही हमारे रक्षक हैं । आप धन प्रदाता हैं, अत: हमारी सन्तति को प्रमाद रहित तथा दीप्तिवान् बनाकर हमारे कुल का विस्तार करें तथा भली-भाँति प्रज्वलित होकर हमारे शरीर की रक्षा करें॥२॥

विधेम ते परमे जन्मन्नग्ने विधेम स्तोमैरवरे सधस्थे ।
यस्माद्योनेरुदारिथा यजे तं प्र त्वे हवींषि जुहुरे समिद्धे ॥३॥

हे अग्निदेव ! आपके उत्पत्तिस्थान द्युलोक में हम स्तुतियों द्वारा आपका पूजन करें, द्युलोक से नीचे अन्तरिक्ष में भी स्तुति युक्त वचनों से आपका पूजन करें और जहाँ आप प्रकट हुए हैं, उस पृथ्वी लोक में यज्ञ में प्रज्वलित होने पर हविष्यान्न समर्पित करके हम आप का पूजन करें॥३॥

अग्ने यजस्व हविषा यजीयाञ्छुष्टी देष्णमभि गृणीहि राधः ।
त्वं ह्यसि रयिपती रयीणां त्वं शुक्रस्य वचसो मनोता ॥४॥

हे अग्निदेव ! आप श्रेष्ठ याज्ञिक हैं, अत: स्वीकार करने योग्य हमारे उपयुक्त पदार्थ एवं धन हमें शीघ्र प्रदान करें । आप हमारी स्तुतियों पर ध्यान दें । आप धनाधिपति हैं॥४॥

उभयं ते न क्षीयते वसव्यं दिवेदिवे जायमानस्य दस्म ।
कृधि क्षुमन्तं जरितारमग्ने कृधि पतिं स्वपत्यस्य रायः ॥५॥

हे दुःखनाशक अग्निदेव ! आपके द्वारा प्रदत्त (दिव्य तथा पार्थिव) दोनों प्रकार का धन कभी भी नष्ट नहीं होता, अत: आप स्तोताओं को यशस्वी बनायें और उत्तम सन्तति युक्त धन प्रदान करें॥५॥

सैनानीकेन सुविदत्रो अस्मे यष्टा देवाँ आयजिष्ठः स्वस्ति ।
अदब्धो गोपा उत नः परस्पा अग्ने द्युमदुत रेवद्दिदीहि ॥६॥

हे अग्निदेव ! आप अपनी तेजस्वी ज्वालाओं के द्वारा हमें उत्तम ऐश्वर्य से युक्त करें । आप किसी से भी तिरस्कृत न होने वाले, उत्तम याज्ञिक देवताओं के पोषक तथा संकटों से पार करने वाले श्रेष्ठ रक्षक हैं ।

आप तेजस्वी, ऐश्वर्यवान् तथा कल्याणकारी रूप में सर्वत्र प्रकाशित हों॥६॥

सूक्त १०

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- अग्नि: । छंद- गायत्री,

जोहूत्रो अग्निः प्रथमः पितेवेळस्पदे मनुषा यत्समिद्धः ।
श्रियं वसानो अमृतो विचेता मर्मृजेन्यः श्रवस्यः स वाजी ॥१॥

जो अग्निदेव यज्ञ स्थल में मनुष्य द्वारा प्रज्वलित होते हैं, वह पिता के समान पालक, प्रमुख तथा पूज्य होते हैं । वे अग्निदेव शोभायुक्त, अमर, विविध ज्ञानों से युक्त, अन्नवान्, बलशाली तथा सभी पदार्थों को पवित्र बनाने वाले हैं, इसलिए वह सबके द्वारा पूज्य भी है॥१॥

श्रूया अग्निश्चित्रभानुर्हवं मे विश्वाभिर्गीर्भिरमृतो विचेताः ।
श्यावा रथं वहतो रोहिता वोतारुषाह चक्रे विभृत्रः ॥२॥

अमर, विशेष ज्ञान से युक्त, अद्‌भुत कान्तिमान् अग्निदेव हमारी सभी प्रकार की वाणियों से की गई प्रार्थना को स्वीकारें । अग्निदेव के रथ को श्याम वर्ण वाले, लाल वर्ण वाले तथा शुक्लवर्ण वाले घोड़े खींचते हैं । वे अग्निदेव विविध स्थानों में भ्रमण करते हैं॥२॥

उत्तानायामजनयन्त्सुषूतं भुवदग्निः पुरुपेशासु गर्भः ।

शिरिणायां चिदक्तुना महोभिरपरीवृतो वसति प्रचेताः ॥३॥

नाना प्रकार की ओषधियों (काष्ठ) में अग्निदेव गुप्त रूप से विद्यमान होते हैं । उनको मंथन द्वारा अध्वर्युगण उत्पन्न करते हैं ये रात्रि में अपने तेज के कारण अन्धकार से आच्छादित न होकर सर्वत्र प्रकाशित होते हैं॥३॥

जिघर्म्यग्निं हविषा घृतेन प्रतिक्षियन्तं भुवनानि विश्वा ।
पृथुं तिरश्चा वयसा बृहन्तं व्यचिष्ठमन्नै रभसं दृशानम् ॥४॥

सम्पूर्ण भुवनों में संव्याप्त, महान् तेजस्वी, काष्ठ आदि पदार्थों से खूब फैलने वाले, तिरछी ज्वालाओं से युक्त, सुन्दर, दर्शनीय अग्निदेव को हम घृत और चरु से सिंचित करके प्रदीप्त करते हैं॥४॥

आ विश्वतः प्रत्यञ्चं जिघर्म्यरक्षसा मनसा तज्जुषेत ।
मर्यश्रीः स्पृहयद्वर्णो अग्निर्नाभिमृशे तन्वा जर्भुराणः ॥५॥

सर्वत्र व्याप्त अग्निदेव को हम घृत से सिंचित करके प्रदीप्त करते हैं । हे अग्निदेव ! समर्पित घृत की आहुतियों को शान्तिपूर्वक ग्रहण करें । मनुष्यों द्वारा पूज्य, कान्तिवान् अग्निदेव, जब तेजस्वी रूप में प्रदीप्त होते हैं, तब कोई स्पर्श नहीं कर सकता॥५॥

ज्ञेया भागं सहसानो वरेण त्वादूतासो मनुवद्वदेम ।
अनूनमग्निं जुह्वा वचस्या मधुपृचं धनसा जोहवीमि ॥६॥

हे अग्निदेव ! आप अपनी शत्रु निवारक शक्ति से शत्रुओं पर विजय प्राप्त करते हुए हमारी स्तुतियों को ग्रहण करें । हम आपकी मनु की

तरह दूत रूप में स्तुति करते हैं । मधुरतायुक्त, धनदाता अग्निदेव को हम स्तुति पूर्वक घृत की आहुतियाँ प्रदान करते हैं॥६॥

सूक्त ११

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- इन्द्र: । छंद- विराट स्थापना ; २१ त्रिष्टुप,

श्रुधी हवमिन्द्र मा रिषण्यः स्याम ते दावने वसूनाम् ।
इमा हि त्वामूर्जो वर्धयन्ति वसूयवः सिन्धवो न क्षरन्तः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे निवेदन को स्वीकार करें, हमे तिरस्कृत न करें । धन दान के समय हम आपके कृपा पात्र रहें । झरते हुए जल के समान (मनुष्यों द्वारा प्रेमपूर्वक) दिया गया हव्य आपकी शक्ति को बढ़ाएँ॥१॥

सृजो महीरिन्द्र या अपिन्वः परिष्ठिता अहिना शूर पूर्वीः ।
अमर्त्यं चिद्दासं मन्यमानमवाभिनदुक्थैर्वावृधानः ॥२॥

हे इन्द्रदेव जिल को रोकने वाले अहि (असुर) के बन्धनों को तोड़कर आपने जल को मुक्त किया, उसे भूमि परबहाया । स्तुतियों से बढ़ते हुए आपने, अपने आपको अमर समझने वाले उस घमण्डी असुर को धराशायी किया॥२॥

उक्थेष्विन्नु शूर येषु चाकन्त्स्तोमेष्विन्द्र रुद्रियेषु च ।

तुभ्येदेता यासु मन्दसानः प्र वायवे सिस्रते न शुभ्राः ॥३॥

हे वीर इन्द्रदेव ! जिन स्तुतियों से आप आनन्दित होते हैं और रुद्रदेव की जिन स्तुति की कामना करते हैं । हे बलशाली ! आपके लिए यज्ञ में वे स्तुतियाँ प्रकट होती हैं॥३॥

शुभ्रं नु ते शुष्मं वर्धयन्तः शुभ्रं वज्रं बाह्वोर्दधानाः ।
शुभ्रस्त्वमिन्द्र वावृधानो अस्मे दासीर्विशः सूर्येण सह्याः ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपके तेजस्वी बल को बढ़ाने वाले चमचमाते वज्र को आपकी भुजाओं में धारण कराते हैं । आप तेजस्वी रूप में विस्तार पाते हुए सूर्य के समान संतापदायीं वज्र से आसुरी प्रजाओं को नष्ट करें॥४॥

गुहा हितं गुह्यं गूळ्हमप्स्वपीवृतं मायिनं क्षियन्तम् ।
उतो अपो द्यां तस्तभ्वांसमहन्नहिं शूर वीर्येण ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आपने द्युलोक में चढ़ाई करके जले को रोके रखने वाले, गुफा में छिपे हुए मायावी 'अहि' असुर को क्षीण करते हुए अपने पराक्रम से मारा॥५॥

स्तवा नु त इन्द्र पूर्व्या महान्युत स्तवाम नूतना कृतानि ।
स्तवा वज्रं बाह्वोरुशन्तं स्तवा हरी सूर्यस्य केतू ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपके द्वारा प्राचीन समय में किये गए श्रेष्ठ कार्यों को यशोगान करते हुए वर्तमान में किये जा रहे कार्यों की प्रशंसा

करते हैं । हाथों में धारण किये सुन्दर वज्र की तथा सूर्य रश्मियों के समान कान्तिमान् आपके अश्वों की भी हम प्रशंसा करें॥६॥

हरी नु त इन्द्र वाजयन्ता घृतश्चुतं स्वारमस्वार्ष्टाम् ।
वि समना भूमिरप्रथिष्टारंस्त पर्वतश्चित्सरिष्यन् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आपके द्रुतगामी अश्वों की गर्जना जल वृष्टि करने वाले मेघों की तरह है । पृथिवी जल बृष्टि से खूब फैल जाती है (उपजाऊ बन जाती हैं) । मेघ दौड़ते हुए पर्वतों पर विचरण करते हैं॥७॥

नि पर्वतः साद्यप्रयुच्छन्त्सं मातृभिर्वावशानो अक्रान् ।
दूरे पारे वाणीं वर्धयन्त इन्द्रेषितां धमनिं पप्रथन्नि ॥८॥

जल युक्त अप्रमादी मेघ आकाश में गर्जना करते हुए विचरण कर रहे थे, तब स्तोताओं की वाणी रूपी स्तुतियों से इन्द्रदेव की प्रेरणा प्राप्त कर मेघ बहुत दूर-दूर तक निरन्तर विस्तृत हुए॥८॥

इन्द्रो महां सिन्धुमाशयानं मायाविनं वृत्रमस्फुरन्निः ।
अरेजेतां रोदसी भियाने कनिक्रदतो वृष्णो अस्य वज्रात् ॥९॥

अन्तरिक्ष में जल का मार्ग रोकने वाले बहुत बड़े मायावी राक्षस वृत्र का इन्द्रदेव ने हनन किया । उस समय बलशाली इन्द्रदेव के सिंह-गर्जना करने वाले वज्र के भय से दोनों लोक काँपने लगे॥९॥

अरोरवीद्वृष्णो अस्य वज्रोऽमानुषं यन्मानुषो निजूर्वात् ।
नि मायिनो दानवस्य माया अपादयत्पपिवान्त्सुतस्य ॥१०॥

मनुष्यों का अहित करने वाले वृत्र राक्षस को जब मनुष्यों का हित करने वाले इन्द्रदेव ने मारा, तब बलशाली इन्द्रदेव के वज्र ने बार-बार गर्जना की । तभी सोमपायी इन्द्रदेव ने इस मायावी राक्षस की माया को नष्ट कर दिया॥१०॥

पिबापिबेदिन्द्र शूर सोमं मन्दन्तु त्वा मन्दिनः सुतासः ।
पृणन्तस्ते कुक्षी वर्धयन्त्वित्था सुतः पौर इन्द्रमाव ॥११॥

हे वीर इन्द्रदेव !इस सोम रस का पान अवश्य करें । यह शोधित आनन्ददायक सोमम आपको हर्षित करे । यह आपके पेट में जाकर आपकी शक्ति को बढ़ाये । इस प्रकार यह (आपके माध्यम से) समस्त प्रज्ञा की रक्षा करे॥११॥

त्वे इन्द्राप्यभूम विप्रा धियं वनेम ऋतया सपन्तः ।
अवस्यवो धीमहि प्रशस्तिं सद्यस्ते रायो दावने स्याम ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! हुम ज्ञानीजन यज्ञीय कर्म की कामना से आपका आश्रय प्राप्त करते हुए आपसे सम्बद्ध हो । आपकी बुद्धि प्राप्त करें । आपकी स्तुतियाँ करते हुए हम लोग संरक्षण की कामना करते हैं । आपके दान से हमें धन प्राप्त हो॥१२॥

स्याम ते त इन्द्र ये त ऊती अवस्यव ऊर्जं वर्धयन्तः ।
शुष्मिन्तमं यं चाकनाम देवास्मे रयिं रासि वीरवन्तम् ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! हम रक्षा की कामना से आपको तेजस्वी बनाते हैं, अतः सदैव हम आपके संरक्षण में रहें । हमारी कामना के अनुरूप वीरों (पुत्रों) से युक्त धन हमें प्रदान करें॥१३॥

रासि क्षयं रासि मित्रमस्मे रासि शर्ध इन्द्र मारुतं नः ।
सजोषसो ये च मन्दसानाः प्र वायवः पान्त्यग्रणीतिम् ॥१४॥

हे इन्द्रदेव ! समान रूप से परस्पर प्रेम रखने वाले, हर्षदायक जो मरुद्गण अग्रणी होकर नेतृत्व प्रदान करने वालों की रक्षा करते हैं, उन मरुतों का मित्रवत् शक्तियुक्त आश्रय हमें प्रदान करें॥१४॥

व्यन्त्विन्नु येषु मन्दसानस्तृपत्सोमं पाहि द्रह्यदिन्द्र ।
अस्मान्त्सु पृत्स्वा तरुत्रावर्धयो द्यां बृहद्भिरर्कैः ॥१५॥

हे इन्द्रदेव ! जिन यज्ञों में आप आनन्दित होते हैं, उनमें तृप्तकारी सोमरस का पान स्थिर होकर करें । सभी स्तोतागण भी उस सोम का पान करें । हे संकटों से पार करने वाले देव ! हमारे महान् स्तोत्रों से संग्राम में हमें तेजस्वी बनाएँ और आकाश को समृद्ध बनाएँ॥१५॥

बृहन्त इन्नु ये ते तरुत्रोक्थेभिर्वा सुम्नमाविवासान् ।
स्तृणानासो बर्हिः पस्त्यावत्त्वोता इदिन्द्र वाजमग्मन् ॥१६॥

हे दुःख नाशक इन्द्रदेव ! जो महान् साधक स्तोत्रों द्वारा आपका स्नेह चाहते हैं एवं कुश का आसन प्रदान करते हैं, वे शीघ्र ही आपका संरक्षण प्राप्त करके अन्न और गृह प्राप्त करते हैं॥१६॥

उग्रेष्विन्नु शूर मन्दसानस्त्रिकद्रुकेषु पाहि सोममिन्द्र ।
प्रदोधुवच्छमश्रुषु प्रीणानो याहि हरिभ्यां सुतस्य पीतिम् ॥१७॥

हे वीर इन्द्रदेव ! जो सोम रस तीनों लोकों में सूर्य के समान बल प्रदान करने वाला है, आनन्दित होते हुए उसका पान करें । श्रेष्ठ घोड़ों पर आरूढ़ होकर दाढ़ी-मूंछों को झाड़कर सोमरस का पान करें॥१७॥

धिष्वा शवः शूर येन वृत्रमवाभिनद्दानुमौर्णवाभम् ।
अपावृणोज्र्योतिरार्याय नि सव्यतः सादि दस्युरिन्द्र ॥१८॥

हे वीर इन्द्रदेव ! मकड़ी के जाल के समान अवरोधों से जल को रोके रखने वाले असुर वृत्र को जिस पराक्रम से आपने छिन्न-भिन्न किया, उसी बल का प्रयोग करें । आपने दस्युओं (अवरोधों) को हटाकर मनुष्यों को सूर्य का प्रकाश उपलब्ध कराया॥१८॥

सनेम ये त ऊतिभिस्तरन्तो विश्वाः स्पृध आर्येण दस्यून् ।
अस्मभ्यं तत्त्वाष्ट्रं विश्वरूपमरन्धयः साख्यस्य त्रिताय ॥१९॥

हे इन्द्रदेव !मनुष्य मात्र का संरक्षण करते हुए आपने त्रिविध (कायिक, वाचिक तथा मानसिक ताप देने वाले असुरों को अपने वश में किया था तथा त्वष्टा के पुत्र विश्वरूप को नष्ट किया था । आप हमें भी संरक्षण प्रदान करें॥१९॥

अस्य सुवानस्य मन्दिनस्त्रितस्य न्यर्बुदं वावृधानो अस्तः ।
अवर्तयत्सूर्यो न चक्रं भिनद्बलमिन्द्रो अङ्गिरस्वान् ॥२०॥

यज्ञकर्ता त्रित के शत्रु अर्बुद को इन्द्रदेव ने स्वयं बढ़ते हुए, आनन्दित होकर मारा था । अंगिराओं के मित्र इन्द्रदेव ने सूर्यदेव द्वारा रथ के पहिए घुमाने की भाँति अपने वज्र को घुमाकर असुरों को नष्ट किया॥२०॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी ।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥२१॥

हे इन्द्रदेव ! यज्ञ के समय स्तोताओं के लिए आपके द्वारा दी गई ऐश्वर्य युक्त दक्षिणा निश्चित ही उत्तम धन प्राप्त कराती हैं । स्तोताओं के साथ हमें भी वह ऐश्वर्य युक्त दक्षिणा प्रदान करें, जिससे हम यज्ञ में महान् पराक्रम प्रदान करने वाले स्तोत्रों का उच्चारण करें॥२१॥

सूक्त १२

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- इन्द्र: । छंद- त्रिष्टुप,

यो जात एव प्रथमो मनस्वान्देवो देवान्क्रतुना पर्यभूषत् ।
यस्य शुष्माद्रोदसी अभ्यसेतां नृम्णस्य मह्ना स जनास इन्द्रः ॥१॥

हे मनुष्यो ! अपने पराक्रम के प्रभाव से ख्याति प्राप्त उन मनस्वी इन्द्रदेव ने उत्पन्न होते ही अपने श्रेष्ठ कर्मों से देवताओं को अलंकृत कर दिया था, जिसकी शक्ति से आकाश और पृथिवी दोनों लोक भयभीत हो गये॥१॥

यः पृथिवीं व्यथमानामदंहद्यः पर्वतान्प्रकुपिताँ अरम्णात् ।
यो अन्तरिक्षं विममे वरीयो यो द्यामस्तभ्नात्स जनास इन्द्रः ॥२॥

हे मनुष्यो ! उन इन्द्रदेव ने विशाल आकाश को मापा, द्युलोक को धारण किया तथा भूकम्पों से काँपती हुई पृथिवी को मजबूत आधार प्रदान करके आग उगलते पर्वतों को स्थिर किया॥२॥

यो हत्वाहिमरिणात्सप्त सिन्धून्यो गा उदाजदपधा वलस्य ।
यो अश्मनोरन्तरग्निं जजान संवृक्समत्सु स जनास इन्द्रः ॥३॥

हे मनुष्यों ! जिसने वृत्र राक्षस को मारकर (जल वृष्टि कराकर) सात नदियों को प्रवाहित किया जिसने वल (राक्षस) द्वारा अपहृत की गयी गौओं को मुक्त कराया, जिसने पाषाणों के बीच अग्निदेव को उत्पन्न, किया, जिसने शत्रुओं का संहार किया, वे ही इन्द्रदेव हैं॥३॥

येनेमा विश्वा च्यवना कृतानि यो दासं वर्णमधरं गुहाकः ।
श्वघ्नीव यो जिगीवाँल्लक्षमाददर्यः पुष्टानि स जनास इन्द्रः ॥४॥

हे मनुष्यो ! जिसने समस्त गतिशील लोकों का निर्माण किया, जिसने दास वर्ण (अमानवीय आचरण वालों) को निम्न स्थान प्रदान किया; जिसने अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लिया और जिसने व्याध द्वारा पशुओं के समान शत्रुओं की समृद्धि को अपने अधिकार में ले लिया, वे हीं इन्द्रदेव हैं॥४॥

यं स्मा पृच्छन्ति कुह सेति घोरमुतेमाहुर्नैषो अस्तीत्येनम् ।
सो अर्यः पुष्टीर्विज इवा मिनाति श्रदस्मै धत्त स जनास इन्द्रः ॥५॥

जिन इन्द्रदेव के बारे में लोग पूछा करते हैं कि वे कहाँ हैं ? उन इन्द्रदेव के सम्बन्ध में कुछ लोग कहते हैं । कि वे हैं ही नहीं । वे इन्द्रदेव उन्हें न मानने वाले शत्रुओं की पोषणकारी सम्पत्ति को वीरता के साथ नष्ट कर देते हैं । हे मनुष्यो ! इन इन्द्रदेव के प्रति श्रद्धा व्यक्त करो, ये सबसे महान् देव इन्द्र ही हैं॥५॥

यो रध्रस्य चोदिता यः कृशस्य यो ब्रह्मणो नाधमानस्य कीरेः ।
युक्तग्राव्णो योऽविता सुशिप्रः सुतसोमस्य स जनास इन्द्रः ॥६॥

हे मनुष्यो ! जो दरिद्रों, ज्ञानियों तथा स्तुति करने वालों को धन प्रदान करते हैं, सोमरस निकालने के लिए पत्थर रखकर (कूटने के लिए) जो यजमान तैयार है, उस यजमान की जो रक्षा करते हैं, वे ही इन्द्रदेव हैं॥६॥

यस्याश्वासः प्रदिशि यस्य गावो यस्य ग्रामा यस्य विश्वे रथासः ।
यः सूर्यं य उषसं जजान यो अपां नेता स जनास इन्द्रः ॥७॥

हे मनुष्यो ! जिनके अधीन समस्त ग्राम, गौएँ, घोड़े तथा रथ हैं, जिनने सूर्य तथा उषा को उत्पन्न किया, जो समस्त प्रकृति के संचालक हैं, वे ही इन्द्रदेव हैं ॥७॥

यं क्रन्दसी संयती विह्वयेते परेऽवर उभया अमित्राः ।
समानं चिद्रथमातस्थिवांसा नाना हवेते स जनास इन्द्रः ॥८॥

हे मनुष्यो ! परस्पर साथ-साथ चलने वाले द्युलोक तथा पृथिवी लोक जिन्हें सहायता के लिए बुलाते हैं, महान् तथा निम्न स्तरीय शत्रु भी जिन्हें युद्ध में मदद के लिए बुलाते हैं, एकरथ पर आरूढ़ दो वीर साथ-साथ जिन्हें मदद के लिए बुलाते हैं, वे ही इन्द्रदेव हैं॥८॥

यस्मान्न ऋते विजयन्ते जनासो यं युध्यमाना अवसे हवन्ते ।
यो विश्वस्य प्रतिमानं बभूव यो अच्युतच्युत्स जनास इन्द्रः ॥९॥

हे मनुष्यो ! जिनकी सहायता के बिना शूरवीर युद्ध में विजयी नहीं होते, युद्धरत वीर पुरुष अपने संरक्षण के लिए जिन्हें पुकारते हैं, जो समस्त संसार को यथा विधि जानते हुए अपरिमित शक्तिवाले शत्रुओं का संहार कर देते हैं, वे ही इन्द्रदेव हैं॥९॥

यः शश्वतो महोनो दधानानमन्यमानाञ्छर्वा जघान ।
यः शर्धते नानुददाति शृध्यां यो दस्योर्हन्ता स जनास इन्द्रः ॥१०॥

हे मनुष्यो ! जिनने अपने वज्र से महान् पापी शत्रुओं को हनन किया, जो अहंकारी मनुष्यों का गर्व नष्ट कर देते हैं, जो दूसरे के पदार्थों का हरण करने वाले दुष्टों के नाशक हैं, वे ही इन्द्रदेव हैं॥१०॥

यः शम्बरं पर्वतेषु क्षियन्तं चत्वारिंश्यां शरद्यन्वविन्दत् ।
ओजायमानं यो अहिं जघान दानुं शयानं स जनास इन्द्रः ॥११॥

हे मनुष्यो ! जिनने चालीसवें वर्ष में पर्वत में छिपे हुए शंबर राक्षस को ढूंढ़ निकाला, जिनने जल को रोककर रखने वाले सोये हुए असुर वृत्र को मारा, वे ही इन्द्रदेव हैं॥११॥

यः सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मानवासृजत्सर्तवे सप्त सिन्धून् ।
यो रौहिणमस्फुरद्वज्रबाहुर्द्यामारोहन्तं स जनास इन्द्रः ॥१२॥

हे मनुष्यो ! जिनने सात नदियों को सूर्य की सात किरणों की भाँति बलशाली और ओजस्वी रूप में प्रभावित किया, जिनने द्युलोक की ओर चढ़ती रोहिणी को अपने हाथ के वज्र से रोक लिया, वे ही इन्द्रदेव हैं॥१२॥

द्यावा चिदस्मै पृथिवी नमेते शुष्माच्चिदस्य पर्वता भयन्ते ।
यः सोमपा निचितो वज्रबाहुर्यो वज्रहस्तः स जनास इन्द्रः ॥१३॥

हे मनुष्यो ! जिनके प्रति द्युलोक तथा पृथिवी लोक नमनशील हैं, जिनके बल से पर्वत भयभीत रहते हैं, जो सोमपान करने वाले, वज्र के समान भुजाओं वाले तथा शरीर से महान् बलशाली हैं, वे ही इन्द्रदेव हैं॥१३॥

यः सुन्वन्तमवति यः पचन्तं यः शंसन्तं यः शशमानमूती ।
यस्य ब्रह्म वर्धनं यस्य सोमो यस्येदं राधः स जनास इन्द्रः ॥१४॥

हे मनुष्यो !जो सोमरस निकालने वाले, शोधित करने वाले, स्तोत्रों के द्वारा स्तुतियाँ करने वाले को, अपने रक्षा साधनों से संरक्षण प्रदान करते हैं, जिनके स्तोत्र एवं सोम हमारे ऐश्वर्य को बढ़ाने वाला है, वे ही इन्द्रदेव हैं॥१४॥

यः सुन्वते पचते दुध्र आ चिद्वाजं दर्दर्षि स किलासि सत्यः ।
वयं त इन्द्र विश्वह प्रियासः सुवीरासो विदथमा वदेम ॥१५॥

जो सोमयज्ञ करने वाले तथा सोमरस को शोधित करने वाले याजक को धन प्रदान करते हैं, वे निश्चित रूप से सत्यरूप इन्द्रदेव हैं । हे इन्द्रदेव ! हम सन्तति युक्त प्रियजनों के साथ सदैव आपका यशोगान करें॥१५॥

सूक्त १३

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- इन्द्र: । छंद- जगती,

ऋतुर्जनित्री तस्या अपस्परि मक्षू जात आविशद्यासु वर्धते ।
तदाहना अभवत्पिप्युषी पयोंऽशोः पीयूषं प्रथमं तदुक्थ्यम् ॥१॥

वर्षा से सोम की उत्पत्ति होती है, वह सोम जल में (मिश्रित होकर) बढ़ता है । श्रेष्ठ रस वाली लता (सोम बल्ली) कूटकर सोमरस निकालने योग्य होती है । यह प्रशंसनीय सोमरस इन्द्रदेव का हविष्यान्न है॥१॥

सध्रीमा यन्ति परि बिभ्रतीः पयो विश्वप्स्न्याय प्र भरन्त भोजनम् ।
समानो अध्वा प्रवतामनुष्यदे यस्ताकृणोः प्रथमं सास्युक्थ्यः ॥२॥

सभी नदियाँ प्रवाहित होती हुई समुद्र को जल से भरकर मानो भोजन कराती हैं । हे इन्द्रदेव ! यह अभूतपूर्व कार्य करने वाले आप प्रशंसा के योग्य हैं॥२॥

अन्वेको वदति यद्ददाति तद्रूपा मिनन्तदपा एक ईयते ।
विश्वा एकस्य विनुदस्तितिक्षते यस्ताकृणोः प्रथमं सास्युक्थ्यः ॥३॥

सूक्ष्म चेतन प्रवाहों अथवा श्रेष्ठ कर्म-रत व्यक्तियों, यजमानों में से एक जो कुछ देता है, उसके सम्बन्ध में जानकारी देता चलता है । एक (प्राप्त वस्तुओं के) रूपों में भेद करता (अंतर समझाता) चलता है । एक हटाने योग्य को हटाकर शोधन करता चलता है । हे इन्द्रदेव ! आपने पहले ही इन सब कर्मों को सम्पन्न किया, इसलिए आप प्रशंसनीय हैं॥३॥

प्रजाभ्यः पुष्टिं विभजन्त आसते रयिमिव पृष्ठं प्रभवन्तमायते ।
असिन्वन्दंष्ट्रैः पितुरत्ति भोजनं यस्ताकृणोः प्रथमं सास्युक्थ्यः ॥४॥

(देवगण) अभ्यागतों की तरह प्रजा के लिए ऐश्वर्य तथा पोषक अन्न प्रदान करते हैं । जिस प्रकार मनुष्य अपने दाँतों से चबाकर भोजन खाता है, उसी प्रकार आप (प्रलय काल में समस्त जगत् को खा जाते हैं । इन किये गये हितकारी कार्यों के लिए आप प्रशंसा के योग्य हैं॥४॥

अधाकृणोः पृथिवीं संदृशे दिवे यो धौतीनामहिहन्नारिणक्पथः ।
तं त्वा स्तोमेभिरुदभिर्न वाजिनं देवं देवा अजनन्त्सास्युक्थ्यः ॥५॥

हे वृत्रनाशक इन्द्रदेव ! आपने नदियों को प्रवाहित होने का मार्ग प्रशस्त किया और सूर्य के प्रकाश में दर्शनीय पृथिवी को स्थापित किया । जिस प्रकार ओषधियों को जल से सींचकर पुष्टिकारक बनाते हैं, उसी प्रकार स्तोत्रों के माध्यम से स्तुतियाँ करके साधक आपको बलशाली बनाते हैं । इस प्रकार आप प्रशंसा के योग्य हैं॥५॥

यो भोजनं च दयसे च वर्धनमार्द्रादा शुष्कं मधुमद्दुदोहिथ ।

स शेवधिं नि दधिषे विवस्वति विश्वस्यैक ईशिषे सास्युक्थ्यः ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आप (प्राणियों को) वृद्धि के साधन तथा भोजन प्रदान करते हैं । गीले पौधों से मधुर सूखे पदार्थ (फल या अन्न) प्राप्त कराते हैं । ऐश्वर्य प्रदान करने वाले आप अकेले ही सम्पूर्ण विश्व के स्वामी हैं । अत: आप प्रशंसा के योग्य हैं॥६॥

यः पुष्पिणीश्च प्रस्वश्च धर्मणाधि दाने व्यवनीरधारयः ।
यश्चासमा अजनो दिद्युतो दिव उरुरूर्वाँअभितः सास्युक्थ्यः ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आपने खेतों में फूल व फल वाली ओषधियों को गुणवान् बनाकर उनका संरक्षण किया है । आपने प्रकाशित सूर्य को नाना किरणें प्रदान कीं । आपकी महानता से ही सुदूर तक विस्तृत पर्वतों का प्रादुर्भाव हुआ । ऐसे महान् आप प्रशंसा के योग्य हैं॥७॥

यो नार्मरं सहवसुं निहन्तवे पृक्षाय च दासवेशाय चावहः ।
ऊर्जयन्त्या अपरिविष्टमास्यमुतैवाद्य पुरुकृत्सास्युक्थ्यः ॥८॥

हे बहुकर्मा इन्द्रदेव ! आपने दस्युओं के विनाश के उद्देश्य से नृमर के पुत्र सहसवसु को बलशाली वज्र के वार से मारा तथा अन्नादि प्राप्त किया, अत: आप प्रशंसा के योग्य हैं॥८॥

शतं वा यस्य दश साकमाद्य एकस्य श्रुष्टौ यद्ध चोदमाविथ ।
अरज्जौ दस्यून्त्समुनब्दभीतये सुप्राव्यो अभवः सास्युक्थ्यः ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आपने दानशील यजमान के सुख के लिए संरक्षण प्रदान किया, आपके रथ को दस सौ (हजारों) अश्व खींचते हैं । आपने रस्सी

से बाँधे बिना दभीति अंष के दस्युओं को नष्ट किया और उनके श्रेष्ठ मित्र बने । आप प्रशंसा के योग्य हैं॥९॥

विश्वेदनु रोधना अस्य पौंस्यं ददुरस्मै दधिरे कृत्नवे धनम् ।
षळस्तभ्ना विष्टिरः पञ्च संदृशः परि परो अभवः सास्युक्थ्यः ॥१०॥

इन्द्रदेव के पराक्रम के अनुकूल सारी नदियाँ (धाराएँ) प्रवाहित होती हैं । उनके लिए सभी धन एकत्रित करते हैं तथा यजमान हविष्यान्न देते हैं । हे इन्द्रदेव ! आपने पंचजनों के पालन के लिए छः विशाल पदार्थों को धारण किया है, अतः आप प्रशंसा के योग्य हैं॥१॥

सुप्रवाचनं तव वीर वीर्यं यदेकेन क्रतुना विन्दसे वसु ।
जातूष्ठिरस्य प्र वयः सहस्वतो या चकर्थ सेन्द्र विश्वास्युक्थ्यः ॥११॥

हे इन्द्रदेव !आप एक बार के प्रयास से हीं इच्छित ऐश्वर्य प्राप्त कर लेते हैं, आपका यह पराक्रम प्रशंसनीय है। आप उत्पन्न प्राणियों को अन्न देने वाले एवं महान् कार्यों के कर्ता हैं, इसी कारण आप प्रशंसा के योग्य हैं॥११॥

अरमयः सरपसस्तराय कं तुर्वीतये च वय्याय च स्रुतिम् ।
नीचा सन्तमुदनयः परावृजं प्रान्धं श्रोणं श्रवयन्त्सास्युक्थ्यः ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आपने तुर्वीति तथा वय्य को प्रवाहित जल से सुख पूर्वक पार जाने का मार्ग प्रशस्त किया । अंधे एवं पंगु परावृक ऋषि को आपने गहरे जल से निकालकर आँख तथा पैर प्रदान करके अपनी कीर्ति बढ़ाई । आप प्रशंसा के योग्य हैं॥१२॥

अस्मभ्यं तद्वसो दानाय राधः समर्थयस्व बहु ते वसव्यम् ।
इन्द्र यच्चित्रं श्रवस्या अनु द्यून्बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! आप महान् ऐश्वर्यशाली हैं । श्रेष्ठ कार्यों के निमित्त आप हमें धन प्रदान करें । हम सदैव आपके धन को प्राप्त करने की कामना करते हैं । हम यज्ञ में पुत्र-पौत्रों सहित स्तोत्रों का गायन करके आपकी स्तुति करें॥१३॥

सूक्त १४

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- इन्द्र: । छंद- त्रिष्टुप,

अध्वर्यवो भरतेन्द्राय सोममामत्रेभिः सिञ्चता मद्यमन्धः ।
कामी हि वीरः सदमस्य पीतिं जुहोत वृष्णे तदिदेष वष्टि ॥१॥

हे अध्वर्युगणो ! सदैव सोम-पान की कामना वाले वीर इन्द्रदेव को भरपूर मात्रा में सोमरस तथा पात्रों में हर्षदायक अन्न प्रदान करें । इन्द्रदेव की कामना के अनुसार सुखवर्षक सोम की आहुतियाँ उन्हें प्रदान करें॥१॥

अध्वर्यवो यो अपो वव्रिवांसं वृत्रं जघानाशन्येव वृक्षम् ।
तस्मा एतं भरत तद्वशायँ एष इन्द्रो अर्हति पीतिमस्य ॥२॥

हे अध्वर्युगणो ! जिस तरह बिजली वृक्ष को धराशायी कर देती है, उसी तरह जिन इन्द्रदेव ने जल को रोककर रखने वाले वृत्र को धराशायी किया था, वे इन्द्रदेव इस सोमरस पान के योग्य हैं, अत: उनकी कामनानुसार सोम रस प्रदान करो॥२॥

अध्वर्यवो यो दृभीकं जघान यो गा उदाजदप हि वलं वः ।

तस्मा एतमन्तरिक्षे न वातमिन्द्रं सोमैरोर्णुत जूर्न वस्त्रैः ॥३॥

हे अध्वर्युगणो ! जिन इन्द्रदेव ने दृभीक राक्षस का हनन किया, जिनने बल-पूर्वक रोकी गई गौओं (किरणों) को मुक्त कराया । उन इन्द्रदेव के निमित्त, आकाश में व्याप्त वायु की तरह यह सोम स्थापित करो । शरीर को बस्त्रों से आच्छादित करने की भाँति इन्द्रदेव को सोम से आच्छादित करो॥३॥

अध्वर्यवो य उरणं जघान नव चख्वांसं नवतिं च बाहून् ।
यो अर्बुदमव नीचा बबाधे तमिन्द्रं सोमस्य भृथे हिनोत ॥४॥

हे अध्वर्युगणो ! जिन इन्द्रदेव ने उरण नामक राक्षस की निन्यानबे भुजाओं को काटा और उसे मारा तथा अर्बुद राक्षस को अधोमुख करके उसे पीड़ित किया, उन इन्द्रदेव को सोम यज्ञ में आने के लिए प्रेरित करो॥४॥

अध्वर्यवो यः स्वश्नं जघान यः शुष्णमशुषं यो व्यंसम् ।
यः पिप्रुं नमुचिं यो रुधिक्रां तस्मा इन्द्रायान्धसो जुहोत ॥५॥

जिन इन्द्रदेव ने अश्न, प्रज्ञाशोषक शुष्ण, बाहुरहित अहि, पिपु, नमुचि तथा रुधिक्रा नामक राक्षसों का वध किया, उन इन्द्रदेव को विभिन्न हविष्यान्नों की आहुतियाँ समर्पित करो॥५॥

अध्वर्यवो यः शतं शम्बरस्य पुरो बिभेदाश्मनेव पूर्वीः ।
यो वर्चिनः शतमिन्द्रः सहस्रमपावपद्भरता सोममस्मै ॥६॥

हे अध्वर्युगणो ! जिन इन्द्रदेव ने शम्बर राक्षस के सौ पुराने नगरों को अपने शक्तिशाली वज्र से ध्वंस किया, जिनने वर्चीक के सौ हजार पुत्रों को धराशायी किया, उन इन्द्रदेव के निमित्त सोम प्रदान करो॥६॥

अध्वर्यवो यः शतमा सहस्रं भूम्या उपस्थेऽवपज्जघन्वान् ।
कुत्सस्यायोरतिथिग्वस्य वीरान्त्सावृणग्भरता सोममस्मै ॥७॥

हे अध्वर्युगणो ! जिन शत्रुनाशक इन्द्र देव ने हजारों असुरा को मारकर सैकड़ों बार भूमि पर बिछा दिया । जिनने कुत्स, आयु तथा अतिथिग्व के द्वेषियों का वध किया, उन इन्द्रदेव के निमित्त सोम एकत्रित करो॥७॥

अध्वर्यवो यन्नरः कामयाध्वे श्रुष्टी वहन्तो नशथा तदिन्द्रे ।
गभस्तिपूतं भरत श्रुतायेन्द्राय सोमं यज्यवो जुहोत ॥८॥

हे अध्वर्युगणो ! नेता इन्द्रदेव को हविष्यान्न प्रदान करके अपनी कामनानुसार वाञ्छित वस्तुएँ प्राप्त करो । अंगुलियों से शोधित सोम को यशस्वी इन्द्रदेव के निमित्त प्रदान करते हुए आहुतियाँ दें॥८॥

अध्वर्यवः कर्तना श्रुष्टिमस्मै वने निपूतं वन उन्नयध्वम् ।
जुषाणो हस्त्यमभि वावशे व इन्द्राय सोमं मदिरं जुहोत ॥९॥

हे अध्वर्युगणो काष्ठपात्र में शोधित सोमरस को रखकर इन्द्रदेव के समीप पहुँचाओ । वे सोमपायी तुम्हारे हाथ में शोधित सोमरस की इच्छा करते हैं । अतः इन्द्रदेव को हर्षित करने वाले सोम की आहुतियाँ समर्पित करो॥९॥

अध्वर्यवः पयसोधर्यथा गोः सोमेभिरीं पृणता भोजमिन्द्रम् ।
वेदाहमस्य निभृतं म एतद्वित्सन्तं भूयो यजतश्चिकेत ॥१०॥

हे अध्वर्युगणो ! जिस तरह गाय के थन दूध से भरे रहते हैं, उसी तरह भोज्य पदार्थ प्रदान करने वाले इन्द्रदेव को सोम के द्वारा पूर्ण करो । इससे पूज्य इन्द्रदेव दाता यजमान को और अधिक ऐश्वर्य प्रदान करते हैं । इस गोपनीय रहस्य को हम भली-भाँति जानते हैं॥१०॥

अध्वर्यवो यो दिव्यस्य वस्वो यः पार्थिवस्य क्षम्यस्य राजा ।
तमूर्दरं न पृणता यवेनेन्द्रं सोमेभिस्तदपो वो अस्तु ॥११॥

हे अध्वर्युगणो ! इन्द्रदेव द्युलोक, पृथ्वीलोक तथा अन्तरिक्ष में उत्पन्न समस्त ऐश्वर्य के स्वामी हैं । जिस प्रकार से जौ आदि अन्न से कोठे भरे जाते हैं उसी प्रकार उन इन्द्रदेव को सोमरस के द्वारा सदैव पूर्ण करते रहो॥११॥

अस्मभ्यं तद्वसो दानाय राधः समर्थयस्व बहु ते वसव्यम् ।
इन्द्र यच्चित्रं श्रवस्या अनु द्यून्बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥१२॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आप महान् ऐश्वर्यशाली हैं, अतः श्रेष्ठ कार्यों के निमित्त हमें धन प्रदान करें । हम सदैव आपके धन को प्राप्त करने की कामना करते हैं । हम इस यज्ञ में पुत्र-पौत्रों सहित उत्तम स्तोत्रों का गायन करके आपकी स्तुतियाँ करें॥१२॥

सूक्त १५

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- इन्द्र: । छंद- त्रिष्टुप,

प्र घा न्वस्य महतो महानि सत्या सत्यस्य करणानि वोचम् ।
त्रिकद्रुकेष्वपिबत्सुतस्यास्य मदे अहिमिन्द्रो जघान ॥१॥

उन महान् सत्य संकल्प धारी इन्द्रदेव के यथार्थ तथा महान् कर्मों का हम यशोगान करते हैं । इन्द्रदेव ने तीनों लोकों में व्याप्त सोम का पान करके इस सोम से आनन्दित होकर अहि राक्षस का वध किया॥१॥

अवंशे द्यामस्तभायद्बृहन्तमा रोदसी अपृणदन्तरिक्षम् ।
स धारयत्पृथिवीं पप्रथच्च सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार ॥२॥

सोमरस के पान से उत्साहित होकर इन्द्रदेव ने बिना स्तम्भों के द्युलोक तथा अन्तरिक्ष को स्थिर किया । इन दोनों लोकों को अपनी सत्ता से अनुप्राणित किया तथा पृथ्वी लोक को धारण करके उसका विस्तार किया॥२॥

सद्मेव प्राचो वि मिमाय मानैर्वज्रेण खान्यतृणन्नदीनाम् ।

वृथासृजत्पथिभिर्दीर्घयाथैः सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार ॥३॥

सोमरस के पान से उत्साहित होकर इन्द्रदेव ने समस्त संसार को माप करके पूर्वाभिमुख बनाया । अपने वज्र के प्रहार से दीर्घकाल तक सहज प्रवाहित होने योग्य नदियों का मार्ग बनाया॥३॥

स प्रवोळ्हॄन्परिगत्या दभीतेर्विश्वमधागायुधमिद्धे अग्नौ ।
सं गोभिरश्वैरसृजद्रथेभिः सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार ॥४॥

सोमरस के पान से आनन्दित होकर इन्द्रदेव ने 'दभीति' ऋषि को अपहृत करके ले जा रहे सारे असुरों को मार्ग में ही रोक कर, आयुधों से प्रदीप्त हुई अग्नि से जलाकर मारा, उन 'दभीति' ऋषि को गौओं, घोड़ों तथा रथों से विभूषित किया॥४॥

स ईं महीं धुनिमेतोररम्णात्सो अस्नातॄनपारयत्स्वस्ति ।
त उत्स्नाय रयिमभि प्र तस्थुः सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार ॥५॥

सोमरस के पान से उत्साहित होकर इन्द्रदेव ने पार जाने में असमर्थों को पार जाने के लिए विशाल नदी के प्रवाह को धीमा किया । उस नदी से पार निकल कर ऋषिगण ऐश्वर्य को लक्ष्य करके आगे बढ़ते हैं॥५॥

सोदञ्चं सिन्धुमरिणान्महित्वा वज्रेणान उषसः सं पिपेष ।
अजवसो जविनीभिर्विवृश्चन्त्सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार ॥६॥

सोमरस के पान से आनन्दित होकर इन्द्रदेव ने अपने पराक्रम से नदी का प्रवाह उत्तराभिमुख किया । उनने अपनी द्रुतगामी सेनाओं

के द्वारा उषा की निर्बल सेनाओं को नष्ट करते हुए उसके रथ को छिन्न-भिन्न किया था॥६॥

स विद्वाँ अपगोहं कनीनामाविर्भवन्नुदतिष्ठत्परावृक् ।
प्रति श्रोणः स्थाद्यनगचष्ट सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार ॥७॥

पंगु तथा चक्षुहीन ऋष परावृक् अपने ब्याह के लिए लाई हुई कन्याओं को भागते हुए देखकर उनके पीछे दौड़ पड़े थे, स्तुति से प्रसन्न इन्द्रदेव ने उन्हें पैर तथा आँखें प्रदान की । यह कार्य इन्द्रदेव ने सोम रस के पान से आनन्दित होकर किया॥७॥

भिनद्बलमङ्गिरोभिर्गृणानो वि पर्वतस्य दंहितान्यैरत् ।
रिणग्रोधांसि कृत्रिमाण्येषां सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार ॥८॥

अंगिरा आदि स्तोताओं की स्तुतियों से प्रसन्न होकर तथा सोमरस के पान से उत्साहित होकर इन्द्रदेव ने पर्वत के सुदृढ़ द्वारों को खोलकर असुरों की रची हुई बाधाओं को हटाते हुए 'वल' नामक असुर को विदीर्ण किया था॥८॥

स्वप्नेनाभ्युप्या चुमुरिं धुनिं च जघन्थ दस्युं प्र दभीतिमावः ।
रम्भी चिदत्र विविदे हिरण्यं सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आपने सोमरस के पान से उत्साहित होकर 'दभीति' की रक्षा के लिए दुष्ट राक्षस'चमुरि' तथा 'धुनि' को दीर्घ निद्रा में सुलाते हुए मारा था । इस अवसर पर दण्डधारियों (द्वारपालों) ने धन प्राप्त किया॥९॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी ।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥१०॥

हे इन्द्रदेव !आपकी ऐश्वर्ययुक्त दक्षिणा स्तोताओं के लिए वरदायक होती है । उसे हमें भी प्रदान करें । आप हमें न त्यागें, हमें भी ऐश्वर्य से युक्त करें । हम यज्ञ में पुत्र-पौत्रों सहित महान् स्तोत्रों से आपकी स्तुतियाँ करें॥१०॥

सूक्त १६

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- इन्द्रः। छंद- जगती

प्र वः सतां ज्येष्ठतमाय सुष्टुतिमग्नाविव समिधाने हविर्भरे ।
इन्द्रमजुर्यं जरयन्तमुक्षितं सनाद्युवानमवसे हवामहे ॥१॥

हम देवों में सर्वश्रेष्ठ इन्द्रदेव के निमित्त अत्यन्त दीप्तिमान् अग्नि में सुन्दर स्तुतियों के साथ आहुतियाँ समर्पित करते हैं । उन सनातन शक्ति सम्पन्न, कभी भी नष्ट न होने वाले, शत्रुनाशक तथा सोम से तृप्त इन्द्रदेव का तुम्हारे संरक्षण के लिए आवाहन करते हैं॥१॥

यस्मादिन्द्राद्बृहतः किं चनेमृते विश्वान्यस्मिन्त्सम्भृताधि वीर्या ।
जठरे सोमं तन्वी सहो महो हस्ते वज्रं भरति शीर्षणि क्रतुम् ॥२॥

इस विराट् संसार में इन्द्रदेव ही सबसे महान् हैं । वे पराक्रम से युक्त इन्द्रदेव उदर में सोमरस, शरीर में तेजस्वी बल, हाथ में वज्र तथा शिर में महान् ज्ञान धारण किए हुए हैं॥२॥

न क्षोणीभ्यां परिभ्वे त इन्द्रियं न समुद्रैः पर्वतैरिन्द्र ते रथः ।
न ते वज्रमन्वश्नोति कश्चन यदाशुभिः पतसि योजना पुरु ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप जब अपने द्रुतगामी अश्वों के द्वारा अनेक योजन पार करते हैं, उस समय आपकी शक्ति को द्यावा-पृथिवी भी नहीं नाप सकती । हे इन्द्रदेव ! आपके रथ को पर्वत तथा समुद्र भी नहीं रोक सकते तथा कोई भी शक्तिशाली वीर आपके वज्र को नहीं रोक सकता॥३॥

विश्वे ह्यस्मै यजताय धृष्णवे क्रतुं भरन्ति वृषभाय सश्चते ।
वृषा यजस्व हविषा विदुष्टरः पिबेन्द्र सोमं वृषभेण भानुना ॥४॥

शत्रुनाशक, पूज्य, बलशाली तथा स्तुत्य इन्द्रदेव के निमित्त सभी लोग यज्ञ करते हैं । हे यजमान : तुम देवगणों को सोम रस प्रदान करने वाले तथा मेधावान् हो, अत: हविष्यान्न की आहुतियों सहित इन्द्रदेव की स्तुति करो । हे इन्द्रदेव ! आप बलशाली एवं तेजस्वी रूप में सोम रस का पान करें॥४॥

वृष्णः कोशः पवते मध्व ऊर्मिर्वृषभान्नाय वृषभाय पातवे ।
वृषणाध्वर्यू वृषभासो अद्रयो वृषणं सोमं वृषभाय सुष्वति ॥५॥

तृप्तिकारक, बलवर्धक, अन्नयुक्त मधुर सोमरस की धारा बलशाली इन्द्रदेव के पान के लिए स्रवित होती है । अध्वर्युगण बलशाली इन्द्रदेव की तृप्ति के लिए सुदृढ़ पत्थरों में (पीसकर) पुष्टिकारक सोमरस तैयार करते हैं॥५॥

वृषा ते वज्र उत ते वृषा रथो वृषणा हरी वृषभाण्यायुधा ।
वृष्णो मदस्य वृषभ त्वमीशिष इन्द्र सोमस्य वृषभस्य तृप्णुहि ॥६॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आपका वज्र, आपका रथ, आपके अश्व तथा आपके आयुध सभी शक्ति से भरपूर हैं । आप बलशाली आनन्द का स्वामित्व करते हैं, अत: बलयुक्त सोमरस का पान करके आप तृप्त हों॥६॥

प्र ते नावं न समने वचस्युवं ब्रह्मणा यामि सवनेषु दाधृषिः ।
कुविन्नो अस्य वचसो निबोधिषदिन्द्रमुत्सं न वसुनः सिचामहे ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप शत्रुनाशक हैं । नाव के समान आप युद्ध में स्तोताओं का उद्धार करते हैं । यज्ञ स्थल में आपके स्तोत्रों का उच्चारण करते हुए हम जाते हैं । हे ऐश्वर्य के भण्डार इन्द्रदेव ! कुँए के समान हम सोमरस से आपको सींचते हैं । आप हमारी प्रार्थना को स्वीकारें॥७॥

पुरा सम्बाधादभ्या ववृत्स्व नो धेनुर्न वत्सं यवसस्य पिप्युषी ।
सकृत्सु ते सुमतिभिः शतक्रतो सं पत्नीभिर्न वृषणो नसीमहि ॥८॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! जिस प्रकार गाय घास खाने के बाद संतुष्ट होकर बछड़े को दूध पिलाने हेतु पहुँच जाती है, उसी प्रकार आप विपत्तियाँ आने से पूर्व ही हमारे पास पहुँचे । हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार पत्नियाँ पतियों को हर्षित करती हैं, उसी प्रकार हम उत्तम स्तोत्रों के द्वारा आपको प्रसन्न करेंगे॥८॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी ।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! यज्ञ के समय आपके द्वारा स्तोताओं के लिए दी गयी ऐश्वर्ययुक्त दक्षिणा निश्चित ही उत्तम धन प्राप्त कराती है । स्तोताओं के साथ हमें भी वह ऐश्वर्य युक्त दक्षिणा प्रदान करें । हम यज्ञ में महान् पराक्रम प्रदान करने वाले स्तोत्रों का उच्चारण करें॥९॥

सूक्त १७

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- इन्द्रः । छंद- जगती, ८-९ त्रिष्टुप।

तदस्मै नव्यमङ्गिरस्वदर्चत शुष्मा यदस्य प्रत्नथोदीरते ।
विश्वा यद्गोत्रा सहसा परीवृता मदे सोमस्य दंहितान्यैरयत् ॥१॥

इन इन्द्रदेव का पराक्रम आदि काल की तरह ही बढ़ रहा हैं । इन्द्रदेव ने सोमरस के पान से उत्साहित होकर शत्रुओं के सम्पूर्ण सुदृढ़ गढ़ों को अपने बल से ध्वस्त कर दिया था । हे स्तोताओ ! अंगिराओं की तरह उत्तम स्तुतियों द्वारा इन्द्रदेव की उपासना करो॥१॥

स भूतु यो ह प्रथमाय धायस ओजो मिमानो महिमानमातिरत् ।
शूरो यो युत्सु तन्वं परिव्यत शीर्षणि द्यां महिना प्रत्यमुञ्चत ॥२॥

जिन इन्द्रदेव ने सर्वप्रथम अपने बल को बढ़ाने के लिए सोम रस का पान किया था, उनका वह बल सदैव बना रहे । शत्रुनाशक इन्द्रदेव ने संग्राम में अपने शरीर पर कवच धारण किया और अपनी महानता से द्युलोक को अपने मस्तक पर धारण किया॥२॥

अधाकृणोः प्रथमं वीर्यं महद्यदस्याग्रे ब्रह्मणा शुष्ममैरयः ।
रथेष्ठेन हर्यश्वेन विच्युताः प्र जीरयः सिस्रते सध्यक्पृथक् ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! स्तोताओं की स्तुतियों से प्रसन्न होकर, शत्रुनाशक बल दिखाकर आपने महान् पराक्रम प्रकट किया । समर्थ घोड़ों वाले रथ में आरूढ़ आपके शत्रुनाशक स्वरूप को देखकर असुरों का समूह अलग-अलग होकर भाग गया॥३॥

अधा यो विश्वा भुवनाभि मज्मनेशानकृत्प्रवया अभ्यवर्धत ।
आद्रोदसी ज्योतिषा वह्निरातनोत्सीव्यन्तमांसि दुधिता समव्ययत् ॥४॥

सबसे उत्कृष्ट बलशाली होकर इन्द्रदेव ने अपने महान् पराक्रम से सभी भुवनों का विस्तार किया और सभी के अधिपति हुए । इसके बाद द्यावा-पृथिवी को अपने तेज से संव्याप्त किया तथा दूर-दूर तक फैले हुए अन्धकार को सूर्य की भाँति नष्ट किया॥४॥

स प्राचीनान्पर्वतान्दृंहदोजसाधराचीनमकृणोदपामपः ।
अधारयत्पृथिवीं विश्वधायसमस्तभ्नान्मायया द्यामवस्रसः ॥५॥

उन महान् इन्द्रदेव ने अपनी सामर्थ्य के द्वारा सभी को आश्रय प्रदान करने वाली पृथिवी को धारण किया तथा धुलोक नीचे न गिरने पाये, इसके लिए थामे रखा । हिलने वाले पर्वतों को अपनी शक्ति से स्थिर किया तथा जल के प्रवाह को नीचे की ओर प्रवाहित किया॥५॥

सास्मा अरं बाहुभ्यां यं पिताकृणोद्विश्वस्मादा जनुषो वेदसस्परि ।
येना पृथिव्यां नि क्रिविं शयध्यै वज्रेण हत्व्यवृणक्तुविष्वणिः ॥६॥

सभी जन्मधारी जीवों के पालनकर्ता इन्द्रदेव ने अपने वज्र को सब प्रकार से समर्थ किया । विद्युत् के समान गर्जना करने वाले वज्र से इन्द्रदेव ने 'क्रिवि' नामक राक्षस को मारकर पृथ्वी पर सुला दिया । वह वज्र इन्द्रदेव की भुजाओं को सामर्थ्यवान् बनाये॥६॥

अमाजूरिव पित्रोः सचा सती समानादा सदसस्त्वामिये भगम् ।
कृधि प्रकेतमुप मास्या भर दद्धि भागं तन्वो येन मामहः ॥७॥

जिस प्रकार माता-पिता के साथ रहने वाली पुत्री अपने माता-पिता से ही आजीविका की याचना करती है, उसी प्रकार हे देव ! हम आप से ऐश्वर्य की याचना करते हैं । आप जिस ऐश्वर्य से स्तोताओं को महान् बनाते हैं, हमारे लिए वह उपयोगी अन्न तथा श्रेष्ठ धन प्रदान करें॥७॥

भोजं त्वामिन्द्र वयं हुवेम ददिष्ट्वमिन्द्रापांसि वाजान् ।
अविड्ढीन्द्र चित्रया न ऊती कृधि वृषन्निन्द्र वस्यसो नः ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आप श्रेष्ठ कर्मा तथा अन्न के दाता हैं । हम लोग पालक के रूप में बार-बार आपका आवाहन करते हैं । आप रक्षा साधनों से युक्त होकर हमें संरक्षण प्रदान करें । हे कामनाओं की पूर्ति करने वाले इन्द्रदेव ! आप हमें ऐश्वर्यवान् बनायें॥८॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी ।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! यज्ञ के समय आपके द्वारा स्तोताओं के निमित्त दी गयी ऐश्वर्य युक्त दक्षिणा निश्चित रूप से धन प्रदान कराती है, अत:

स्तोताओं के साथ हमें भी वह ऐश्वर्य युक्त दक्षिणा प्रदान करें, जिससे हम यज्ञ में महान् पराक्रम प्रदान करने वाले स्तोत्रों से स्तुतियाँ करें॥९॥

सूक्त १८

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- इन्द्र: । छंद- त्रिष्टुप,

प्राता रथो नवो योजि सस्निश्चतुर्युगस्त्रिकशः सप्तरश्मिः ।
दशारित्रो मनुष्यः स्वर्षाः स इष्टिभिर्मतिभी रंह्यो भूत् ॥१॥

प्रातः काल यह नया रथ (यज्ञ) नियोजित किया गया है । इसमें चार युग, तीन कोड़े, सात रश्मियाँ तथा दस चक्र हैं । यह इष्ट प्रयोजनों के लिए मति के अनुरूप गतिमान हो । यह मनुष्यों को स्वर्ग तक पहुँचाने वाला है॥१॥

सास्मा अरं प्रथमं स द्वितीयमुतो तृतीयं मनुषः स होता ।
अन्यस्या गर्भमन्य ऊ जनन्त सो अन्येभिः सचते जेन्यो वृषा ॥२॥

यह रथ इन्द्रदेव को प्रथम, द्वितीय और तृतीय (अर्थात् प्रातः, सायं और मध्याह्न) तीनों सवनों में -यज्ञों में पहुँचाने में समर्थ है । यह रथ मनुष्यों की कामनाओं को पूरा करने वाला है । स्तोतागण एक दूसरे के साथ मिलकर ब्रह्माण्डव्यापी, बलशाली तथा अजेय उन इन्द्रदेव के अनुग्रह को प्राप्त करते हैं॥२॥

हरी नु कं रथ इन्द्रस्य योजमायै सूक्तेन वचसा नवेन ।

मो षु त्वामत्र बहवो हि विप्रा नि रीरमन्यजमानासो अन्ये ॥३॥

इन्द्रदेव के सुखपूर्वक आवागमन के लिए उत्तम स्तुतियों के माध्यम से उनके रथ में दोनों घोड़ों को नियोजित किया गया है । हे इन्द्रदेव ! हमारे अतिरिक्त अन्य कोई भी मेधावी स्तोता आपको भली-भाँति तृप्त नहीं कर सकता॥३॥

आ द्वाभ्यां हरिभ्यामिन्द्र याह्या चतुर्भिरा षड्भिर्हूयमानः ।
आष्टाभिर्दशभिः सोमपेयमयं सुतः सुमख मा मृधस्कः ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा आवाहित आप सोम-पान करने के लिए दो, चार, छ, आठ, दस घोड़ों से आयें । यह सोम रस आपके लिए शोधित किया गया है । आप इसका पान करें, इसके लिए युद्ध न करें॥४॥

आ विंशत्या त्रिंशता याह्यर्वाङ्ा चत्वारिंशता हरिभिर्युजानः ।
आ पञ्चाशता सुरथेभिरिन्द्रा षष्ट्या सप्तत्या सोमपेयम् ॥५॥

हे इन्द्रदेव आप सोमरस का पान करने के लिए रथ के योग्य बीस, तीस, चालीस, पचास, साठ तथा सत्तर घोड़ों को नियोजित करके हमारे पास आयें॥५॥

आशीत्या नवत्या याह्यर्वाङ्ा शतेन हरिभिरुह्यमानः ।
अयं हि ते शुनहोत्रेषु सोम इन्द्र त्वाया परिषिक्तो मदाय ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आपको आनन्दित करने के लिए सोमरस को सुन्दर पात्रों में रखा गया है, अत: आप अस्सी, नब्बे और सौ घोड़ों को अपने रथ में नियोजित करके हमारे पास आयें॥६॥

मम ब्रह्मेन्द्र याह्यच्छा विश्वा हरी धुरि धिष्वा रथस्य ।
पुरुत्रा हि विहव्यो बभूथास्मिञ्छूर सवने मादयस्व ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप बहुतों के द्वारा आमन्त्रित किये गये हैं, अत: हमारे स्तोत्रों को स्वीकार करके अपने रथ में सभी घोड़ों को नियोजित करके हमारे इस यज्ञ में आकर आनन्दित हों॥७॥

न म इन्द्रेण सख्यं वि योषदस्मभ्यमस्य दक्षिणा दुहीत ।
उप ज्येष्ठे वरूथे गभस्तौ प्रायेप्राये जिगीवांसः स्याम ॥८॥

इन्द्रदेव के साथ हमारी मैत्री अटूट रहे । हम उनके उत्तम दाहिने हाथ के समीप रहें । इन्द्रदेव के द्वारा हमें सदैव दान मिलता रहे । इनके संरक्षण में हम प्रत्येक युद्ध में विजय प्राप्त करें॥८॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी ।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! यज्ञ के समय आपके द्वारा स्तोताओं के निमित्त दी गयी ऐश्वर्य युक्त दक्षिणा निश्चित रूप से धन प्रदान कराती है, अत: स्तोताओं के साथ हमें भी वह ऐश्वर्य युक्त दक्षिणा प्रदान करें, जिससे हम यज्ञ में महान् पराक्रम प्रदान करने वाले स्तोत्रों से स्तुतियाँ करें॥९॥

सूक्त १९

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- इन्द्रः । छंद- त्रिष्टुप,

अपाय्यस्यान्धसो मदाय मनीषिणः सुवानस्य प्रयसः ।
यस्मिन्निन्द्रः प्रदिवि वावृधान ओको दधे ब्रह्मण्यन्तश्च नरः ॥१॥

सोमरस को परिष्कृत करने वाले ज्ञान यजमान के द्वारा आनन्द प्रदान करने के लिए दिये गये अन्न (आहार) को इन्द्रदेव ग्रहण करें, वे इन्द्रदेव तथा ज्ञान यजमान उत्तम स्थान प्राप्त करें॥१॥

अस्य मन्दानो मध्वो वज्रहस्तोऽहिमिन्द्रो अर्णोवृतं वि वृश्चत् ।
प्र यद्वयो न स्वसराण्यच्छा प्रयांसि च नदीनां चक्रमन्त ॥२॥

जिस प्रकार पक्षी अपने घोंसलों में जाते हैं, उसी प्रकार नदियों की धारायें प्रवाहित होती हैं । ऐसे प्रवाहित सोमपान से आनन्दित इन्द्रदेव ने हाथ में वज्र धारण करके जल को रोकने वाले अहि नामक राक्षस को मारा था॥२॥

स माहिन इन्द्रो अर्णो अपां प्रैरयदहिहाच्छा समुद्रम् ।
अजनयत्सूर्यं विदद्गा अक्तुनाह्नां वयुनानि साधत् ॥३॥

अहि नामक राक्षस को मारने वाले इन्द्रदेव ने अन्तरिक्ष के जल को सीधे समुद्र की ओर प्रवाहित किया, उन्हीं ने सूर्य तथा सूर्यश्मियों को प्रकट किया, जिसके प्रकाश से दिन में होने वाले सभी कार्यों को हम करते हैं॥३॥

सो अप्रतीनि मनवे पुरूणीन्द्रो दाशद्दाशुषे हन्ति वृत्रम् ।
सद्यो यो नृभ्यो अतसाय्यो भूत्पस्पृधानेभ्यः सूर्यस्य सातौ ॥४॥

जो इन्द्रदेव सूर्य के समान तेजस्वी स्वरूप प्राप्त करने के लिए सब दिन समान रूप से स्पर्धा करते हैं, वे इन्द्रदेव दानशील मनुष्यों के लिए श्रेष्ठ धनों के प्रदाता हैं । वे ही वृत्र राक्षस को मारते हैं॥४॥

स सुन्वत इन्द्रः सूर्यमा देवो रिणङ्मर्त्याय स्तवान् ।
आ यद्रयिं गुहदवद्यमस्मै भरदंशं नैतशो दशस्यन् ॥५॥

जिस प्रकार पुत्र को पिता अपने धन का एक अंश देता है, उसी प्रकार जब इन्द्रदेव को दान दाता एतश' ने यज्ञ के समय अमूल्य तथा उत्तम धन प्रदान किया, तब पूज्य तथा तेजस्वी इन्द्रदेव ने यज्ञ की कामना वाले मनुष्यों के लिए सूर्य को प्रकाशित किया॥५॥

स रन्धयत्सदिवः सारथये शुष्णमशुषं कुयवं कुत्साय ।
दिवोदासाय नवतिं च नवेन्द्रः पुरो व्यैरच्छम्बरस्य ॥६॥

उन तेजस्वी इन्द्रदेव ने सारथि कुत्स (कुत्साओं से समाज की रक्षा करने वालों) के निमित्त शुष्ण (शोषक), अशुष (निष्ठुर) कुयव (कुधान्य) नामक आसुरों का संहार किया तथा दिवोदास के निमित्त

शम्बरासुर (अशान्ति पैदा करने वालों) के निन्यानवे नगरों को ध्वस्त किया॥६॥

एवा त इन्द्रोचथमहेम श्रवस्या न त्मना वाजयन्तः ।
अश्याम तत्साप्तमाशुषाणा ननमो वधरदेवस्य पीयोः ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! हम अन्न और बल की कामना से आपकी स्तुतियाँ करते हैं । आपने देवों की अवमानना करने वाले तथा हिंसक दुष्टों के हिंसाकारी कृत्यों को नष्ट किया । हम आपसे परम मैत्री भाव बनाये रखें॥७॥

एवा ते गृत्समदाः शूर मन्मावस्यवो न वयुनानि तक्षुः ।
ब्रह्मण्यन्त इन्द्र ते नवीय इषमूर्जं सुक्षितिं सुम्नमश्युः ॥८॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! गृत्समदगण अपने उत्तम संरक्षण की कामना से आपकी उत्तम एवं मनोरम स्तोत्रों के द्वारा स्तुतियाँ करते हैं; उसी प्रकार नये ब्रह्मज्ञानी स्तोताजन भी उत्तम आश्रय, अन्न, बल और सुख की प्राप्ति के लिए स्तुतियाँ करते हैं॥८॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी ।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥९॥

है इन्द्रदेव ! यज्ञ काल में आपके द्वारा दी गयी ऐश्वर्य युक्त दक्षिणा निश्चय ही स्तोताओं को धन प्राप्त कराती है, अत: हमें भी स्तोताओं के साथ वह ऐश्वर्य युक्त दक्षिणा दें, जिससे हम यज्ञ में महान् पराक्रम प्रदान करने वाले स्तोत्रों से आपकी स्तुतियाँ करें॥९॥

सूक्त २०

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- इन्द्रः । छंद- त्रिष्टुप,

वयं ते वय इन्द्र विद्धि षु णः प्र भरामहे वाजयुर्न रथम् ।
विपन्यवो दीध्यतो मनीषा सुम्नमियक्षन्तस्त्वावतो नॄन् ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार अन्न की कामना वाले अपने रथ को अन्न से भरते हैं, उसी प्रकार हम स्तोताजन बुद्धि से तेजस्वी होते हुए आपसे सुख की कामना करते हुए आपके लिए हवि प्रदान करते हैं । हमारे इस कार्य को आप भली-भाँति जानें॥१॥

त्वं न इन्द्र त्वाभिरूती त्वायतो अभिष्टिपासि जनान् ।
त्वमिनो दाशुषो वरूतेत्थाधीरभि यो नक्षति त्वा ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! जो आपको ही अपना इष्ट मानता है, उस दानशील मनुष्य के समीप आने पर आप हर प्रकार से उसकी रक्षा करते हैं । आप विपत्तियों से बचाने वाले तथा सत्यकर्मा, न्यायशील हैं, अतः आप अपने रक्षण साधनों से हमें संरक्षण प्रदान करें॥२॥

स नो युवेन्द्रो जोहूत्रः सखा शिवो नरामस्तु पाता ।

यः शंसन्तं यः शशमानमूती पचन्तं च स्तुवन्तं च प्रणेषत् ॥३॥

स्तोत्रों का उच्चारण करने वाले, उत्तम निर्देश देने वाले, हविष्यान्न को तैयार करने वाले तथा स्तोता यजमानों को, जो अपने संरक्षण के द्वारा विपत्तियों से मुक्ति दिलाते हैं, ऐसे नित्य तरुण, मित्रवत् सदैव पास बुलाने योग्य तथा सुखस्वरूप इन्द्रदेव समस्त प्रजा सहित हमें संरक्षण प्रदान करें॥३॥

तमु स्तुष इन्द्रं तं गृणीषे यस्मिन्पुरा वावृधुः शाशदुश्च ।
स वस्वः कामं पीपरदियानो ब्रह्मण्यतो नूतनस्यायोः ॥४॥

जिन इन्द्रदेव के आश्रय में स्तोतागण वृद्धि पाते रहे हैं और शत्रुओं का संहार करते रहें हैं, उन इन्द्रदेव का यशोगान हम स्तुतियों से करते हैं । वे स्तुत्य इन्द्रदेव नये यजमानों की धन की कामना को पूर्ण करते हैं॥४॥

सो अङ्गिरसामुचथा जुजुष्वान्ब्रह्मा तूतोदिन्द्रो गातुमिष्णन् ।
मुष्णन्नुषसः सूर्येण स्तवानश्नस्य चिच्छिश्नथत्पूर्व्याणि ॥५॥

अंगिराओं की स्तुतियों को स्वीकारते हुए वे इन्द्रदेव श्रेष्ठ मार्गदर्शक के रूप में उनके ज्ञान में वृद्धि करते हैं । ये स्तुत्य इन्द्रदेव सूर्य को उदित करके उषा को हरते हुए 'अश्नासुर' (बहुत खाने वाले असुर अन्धकार या आलस्य) को नष्ट कर देते हैं॥५॥

स ह श्रुत इन्द्रो नाम देव ऊर्ध्वो भुवन्मनुषे दस्मतमः ।
अव प्रियमर्शसानस्य साह्वाञ्छिरो भरद्दासस्य स्वधावान् ॥६॥

तेजवान्, कीर्तिवान्, ख्यातिप्राप्त, अत्यन्त दर्शनीय तथा प्रिय इन्द्रदेव ज्ञानवान् स्तोताओं के संरक्षण के लिए सदैव तत्पर रहते हैं । शत्रुनाशक इन्द्रदेव ने संसार के अनिष्टकर्ता दास नामक असुर का सिर काटा॥६॥

स वृत्रहेन्द्रः कृष्णयोनीः पुरंदरो दासीरैरयद्वि ।
अजनयन्मनवे क्षामपश्च सत्रा शंसं यजमानस्य तूतोत् ॥७॥

वृत्रहन्ता, शत्रुओं के दुर्गों को ढहाने वाले इन्द्रदेव ने कृष्ण दासों की (निकृष्ट सेना का संहार किया । मनुष्य के लिए पृथिवी तथा जल को उत्पन्न किया । ऐसे महान् इन्द्रदेव यजमान की श्रेष्ठ कामनाओं को पूरा करें॥७॥

तस्मै तवस्यमनु दायि सत्रेन्द्राय देवेभिरर्णसातौ ।
प्रति यदस्य वज्रं बाह्वोर्धुर्हत्वी दस्यून्पुर आयसीर्नि तारीत् ॥८॥

उन इन्द्रदेव को देवताओं ने युद्ध में संगठित होकर निरन्तर बल प्रदान किया । इन्द्रदेव ने अपनी बलशाली भुजाओं में वज्र को धारण करके दुष्टों का संहार किया तथा उनके दुर्गम नगरों को भी ध्वस्त किया॥८॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी ।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा यज्ञ काल में दी गयी ऐश्वर्ययुक्त दक्षिणा स्तोताओं को निश्चय ही धन प्राप्त कराती है । अतः हमें भी स्तोताओं

के साथ वह ऐश्वर्य युक्त दक्षिणा दें, जिससे हम यज्ञ में महान् पराक्रम प्रदान करने वाले स्तोत्रों से आपकी स्तुतियाँ करें॥९॥

सूक्त २१

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौनहोत्रः पञ्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- इन्द्रः । छंद- जगती, ५- त्रिष्टुप

विश्वजिते धनजिते स्वर्जिते सत्राजिते नृजित उर्वराजिते ।
अश्वजिते गोजिते अब्जिते भरेन्द्राय सोमं यजताय हर्यतम् ॥१॥

हे याजको ! समस्त विश्व को जीतने वाले, धन की विजय करने वाले, संगठित रूप में विजय प्राप्त करने वाले, मनुष्यों को जीतने वाले, उर्वर भूमि को जीतने वाले, घोड़े तथा गौओं को जीतने वाले तथा जल तत्त्व को अपने वश में करने वाले पूज्य इन्द्रदेव के निमित्त तेजस्वी सोम प्रदान करो॥१॥

अभिभुवेऽभिभङ्गाय वन्वतेऽषाळ्हाय सहमानाय वेधसे ।
तुविग्रये वह्नये दुष्टरीतवे सत्रासाहे नम इन्द्राय वोचत ॥२॥

हे याजको ! सर्वव्यापक, प्रलयंकारी, ऐश्वर्य का यथोचित विभाजन करने वाले, अजेय शत्रुओं के आक्रमण को स्वयं झेलने वाले, विश्व के विधाता, पुष्टमीव, सम्पूर्ण जगत् को धारण करने वाले, अपार सामर्थ्य वाले तथा संगठित रूप से युद्ध करने वाले इन्द्रदेव का सदैव यशोगान करो॥२॥

सत्रासाहो जनभक्षो जनंसहश्च्यवनो युध्मो अनु जोषमुक्षितः ।
वृतंचयः सहुरिर्विक्ष्वारित इन्द्रस्य वोचं प्र कृतानि वीर्या ॥३॥

हे याजको ! मनुष्यों के हित के लिए संगठित रूप से लड़ने वाले, बलवानों के विजेता, शत्रु निवारक योद्धा, प्रीतिपूर्वक सोमरस का पान करने वाले, शत्रुहन्ता तथा प्रजा पालक तेजस्वी इन्द्रदेव द्वारा किये गये महान् पराक्रमों का यशोगान करो॥३॥

अनानुदो वृषभो दोधतो वधो गम्भीर ऋष्वो असमष्टकाव्यः ।
रध्रचोदः श्नथनो वीळितस्पृथुरिन्द्रः सुयज्ञ उषसः स्वर्जनत् ॥४॥

हे याजको ! महादानी, बलशाली, दुर्धर्ष शत्रुओं के हन्ता, गम्भीर, सर्वज्ञाता, असाधाण कार्य कुशल, उत्तम कर्मों के प्रेरक, शत्रुओं की शक्ति को क्षीण करने वाले, परिपुष्ट अंगों वाले, श्रेष्ठकर्मा, महान् इन्द्रदेव ने अपनी सामर्थ्य से उषाओं तथा सूर्य को प्रकट किया है॥४॥

यज्ञेन गातुमप्तुरो विविद्रिरे धियो हिन्वाना उशिजो मनीषिणः ।
अभिस्वरा निषदा गा अवस्यव इन्द्रे हिन्वाना द्रविणान्याशत ॥५॥

शीघ्रता से कार्य करने वाले ज्ञानीजन, समृद्धि की कामना से श्रेष्ठ यज्ञीय कर्मों में स्तुतियाँ करते हुए योग्य मार्ग पा जाते हैं, और अपने संरक्षण की कामना से इन्द्रदेव की स्तुतियाँ करते हुए उनके समीप रहकर धन प्राप्त करते हैं॥५॥

इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे ।
पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम् ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! हमें श्रेष्ठ धन प्रदान करें । हमें चेतना युक्त सामर्थ्य तथा उत्तम ऐश्वर्य प्रदान करें । हमें निरोग बनाते हुए ऐश्वर्य की वृद्धि करें । हमारी वाणी को मधुर तथा प्रत्येक दिन को उत्तम बनायें॥६॥

सूक्त २२

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:। देवता- इन्द्र: । छंद- १ अष्टि, २-३ अति शक्करी, ४ अष्टि अतिशक्करी ,

त्रिकद्रुकेषु महिषो यवाशिरं तुविशुष्मस्तृपत्सोममपिबद्विष्णुना सुतं यथावशत् ।
स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुं सैनं सश्चद्देवो देवं सत्यमिन्द्रं सत्य इन्दुः ॥१॥

अत्यन्त बली पूजनीय इन्द्रदेव ने तीनों लोकों में व्याप्त, तृप्तिदायक, दिव्य सोम को जौ के सार भाग के साथ मिलाकर विष्णुदेव के साथ इच्छानुसार पान किया । उस (सोम) ने महान् इन्द्रदेव को श्रेष्ठ कार्य करने के लिये प्रेरित किया । उत्तम दिव्य गुणों से युक्त उस दिव्य सोमरस ने इन्द्रदेव को प्रसन्न किया॥१॥

अध त्विषीमाँ अभ्योजसा क्रिविं युधाभवदा रोदसी अपृणदस्य मज्मना प्र वावृधे ।
अधत्तान्यं जठरे प्रेमरिच्यत सैनं सश्चद्देवो देवं सत्यमिन्द्रं सत्य इन्दुः ॥२॥

है इन्द्रदेव ! अपनी सामर्थ्य से क्रिवि नामक असुर को अपने जीता और आकाश एवं पृथ्वी को तेज से परिपूर्ण कर दिया । आपने सोम के एक भाग को अपने उदर में धारण किया और दूसरा भाग देवों को दिया । सत्यस्वरूप दीप्तिमान् दिव्य सोम सत्यस्वरूप तेजस्वी इन्द्रदेव को पुष्ट करता है॥२॥

साकं जातः क्रतुना साकमोजसा ववक्षिथ साकं वृद्धो वीर्यैः
सासहिर्मृधो विचर्षणिः ।
दाता राधः स्तुवते काम्यं वसु सैनं सश्चद्देवो देवं सत्यमिन्द्रं सत्य इन्दुः
॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञ के साथ प्रकट हुए हैं । अपनी सामर्थ्य से विश्व का भार उठाने को लालायित रहते हैं । हे ज्ञानी श्रेष्ठ इन्द्रदेव ! महान् पराक्रमी, शत्रु संहारक, विशिष्ट ज्ञानी आप स्तोताओं को अभीष्ट ऐश्वर्य देते हैं । सत्यस्वरूप दीप्तिमान् दिव्य सोम सत्य के ज्ञाता इन्द्रदेव को प्राप्त होता है॥३॥

तव त्यन्नर्यं नृतोऽप इन्द्र प्रथमं पूर्व्यं दिवि प्रवाच्यं कृतम् ।
यद्देवस्य शवसा प्रारिणा असुं रिणन्नपः ।
भुवद्विश्वमभ्यादेवमोजसा विदादूर्जं शतक्रतुर्विदादिषम् ॥४॥

सभी को अपने अनुशासन में चलाने वाले हे इन्द्रदेव ! मानव मात्र के हितकारी, सबसे पहले किये गये आपके सबसे उत्कृष्ट कर्म स्वर्ग लोक में प्रशंसित हैं । अपनी शक्ति से आपने राक्षसों का संहार किया, असुरों को हराया तथा जल प्रवाहित किया । शतकर्मा (शतक्रत) इन्द्रदेव ने अन्न एवं बल प्राप्त किया॥४॥

सूक्त २३

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः। देवता- बृहस्पतिः, १,५,९,११,१७,१९ ब्रह्मणस्पतिः। छंद- जगती, १५, १९ त्रिष्टुप

गणानां त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपमश्रवस्तमम् ।
ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पत आ नः शृण्वन्नूतिभिः सीद सादनम् ॥१॥

हे ब्रह्मणस्पतिदेव ! आप गणों के भी गणपति तथा कवियों में भी श्रेष्ठ कवि हैं । आप अनुपमेय, श्रेष्ठ तथा तेजस्वी मंत्रों के स्वामी हैं, अतः हम आपका आवाहन करते हैं । हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर रक्षण साधनों सहित हमें संरक्षण प्रदान करें॥१॥

देवाश्चित्ते असुर्य प्रचेतसो बृहस्पते यज्ञियं भागमानशुः ।
उस्रा इव सूर्यो ज्योतिषा महो विश्वेषामिज्जनिता ब्रह्मणामसि ॥२॥

हे महाबली बृहस्पतिदेव ! सर्वोत्कृष्ट देवताओं ने आपके यज्ञीय भाग को प्राप्त किया था । जिस तरह महान् सूर्य तेजस्वी किरणों को पैदा करते हैं, उसी प्रकार आप सम्पूर्ण ज्ञान के प्रकाशक हैं॥२॥

आ विबाध्या परिरापस्तमांसि च ज्योतिष्मन्तं रथमृतस्य तिष्ठसि ।

बृहस्पते भीममित्रदम्भनं रक्षोहणं गोत्रभिदं स्वर्विदम् ॥३॥

हे बृहस्पतिदेव ! पाप पूर्णकर्म करने वालों को तथा अज्ञानमय अन्धकार को विविध उपायों से नष्ट करके, दुष्ट पुरुषों को भय देने वाले, शत्रुओं के नाशक, राक्षसों का वध करने वाले, सुदृढ़ किलों को ध्वस्त करने वाले तथा यज्ञ के प्रकाशक और सुखदायी आप रथ में विराजमान होते हैं॥३॥

सुनीतिभिर्नयसि त्रायसे जनं यस्तुभ्यं दाशान्न तमंहो अश्नवत् ।
ब्रह्मद्विषस्तपनो मन्युमीरसि बृहस्पते महि तत्ते महित्वनम् ॥४॥

हे बृहस्पतिदेव ! जो आपको हविष्यान्न समर्पित करता है, उसके श्रेष्ठ पथ प्रदर्शक बनकर आप उसे संरक्षण प्रदान करते हैं, उसे कभी पाप नहीं व्यापता । आप ज्ञान द्वेषियों को पीड़ित करने वाले तथा अभिमानियों के नाशक हैं । आपकी महान् महिमा अवर्णनीय है॥४॥

न तमंहो न दुरितं कुतश्चन नारातयस्तितिरुर्न द्वयाविनः ।
विश्वा इदस्माद्ध्वरसो वि बाधसे यं सुगोपा रक्षसि ब्रह्मणस्पते ॥५॥

हे ब्रह्मणस्पतिदेव ! आप जिसे संरक्षण प्रदान करते हैं, उसे सम्पूर्ण हिंसक शक्तियों से बचाते हैं । उसके लिए पाप कर्म दुःखदायी नहीं होते, शत्रु भी उसे कष्ट नहीं पहुँचाते तथा कोई ठग भी उसे भ्रमित नहीं कर सकता॥५॥

त्वं नो गोपाः पथिकृद्विचक्षणस्तव व्रताय मतिभिर्जरामहे ।
बृहस्पते यो नो अभि ह्वरो दधे स्वा तं मर्मर्तु दुच्छुना हरस्वती ॥६॥

हे बृहस्पतिदेव ! आप हमारे संरक्षक तथा मार्गदर्शक हैं । हे सर्वज्ञाता ! आपके नियमानुसार अनुगमन करने के लिए हम मन्त्रों सहित आपकी स्तुति करते हैं । हमारे प्रति जो भी कुटिलता का व्यवहार करे, उसे उसकी ही दुर्बुद्धि नष्ट कर दे॥६॥

उत वा यो नो मर्चयादनागसोऽरातीवा मर्तः सानुको वृकः ।
बृहस्पते अप तं वर्तया पथः सुगं नो अस्यै देववीतये कृधि ॥७॥

हे बृहस्पतिदेव ! शत्रुवत् आचरण करने वाले तथा भेड़िये के समान हिंसक मनुष्य यदि हमें पीड़ित करें तो उन्हें हमारे मार्ग से हटा दें । देवत्व की प्राप्ति के लिए हमारे मार्ग को अपराध रहित बनाते हुए उसे सुगम करें॥७॥

त्रातारं त्वा तनूनां हवामहेऽवस्पर्तरधिवक्तारमस्मयुम् ।
बृहस्पते देवनिदो नि बर्हय मा दुरेवा उत्तरं सुम्नमुन्नशन् ॥८॥

हे बृहस्पतिदेव ! आप शत्रुनाशक बल को विपत्तियों से पार करने वाले हैं । हम आपको अपने शरीरों के पालक मानते हैं, प्रिय गृहपति के रूप में स्वीकार करते हैं, अत: आपका आवाहन करते हैं । आप देवताओं की निन्दा करने वालों को नष्ट करें । दुष्ट आचरण वालों को सुख की प्राप्ति न हो, उनका नाश करें॥८॥

त्वया वयं सुवृधा ब्रह्मणस्पते स्पार्हा वसु मनुष्या ददीमहि ।
या नो दूरे तळितो या अरातयोऽभि सन्ति जम्भया ता अनप्रसः ॥९॥

हे ब्रह्मणस्पतिदेव ! हम याजकगण आप से मनुष्यों के लिए हितकारी तथा चाहने योग्य उत्तम वृद्धिकारक धन की याचना करते हैं । हमारे

पास, दूर तथा चारों ओर जो भी शत्रुरूप आघात करने वाले कर्महीन मनुष्य हैं, उन्हें नष्ट करें॥९॥

त्वया वयमुत्तमं धीमहे वयो बृहस्पते पप्रिणा सस्निना युजा ।
मा नो दुःशंसो अभिदिप्सुरीशत प्र सुशंसा मतिभिस्तारिषीमहि
॥१०॥

हे वाणी के स्वामी बृहस्पतिदेव ! आप पवित्र आचारवान् तथा सभी ऐश्वर्यों से पूर्ण करने वाले हैं, हम आप से जुड़कर आयुष्य प्राप्त करें । दुराचारी तथा ठगने वाला हमारा अधिपति न हो । उत्तम बुद्धि के सहारे प्रशंसनीय रहते हुए हम संकटों को पार करें॥१०॥

अनानुदो वृषभो जग्मिराहवं निष्टप्ता शत्रुं पृतनासु सासहिः ।
असि सत्य ऋणया ब्रह्मणस्पत उग्रस्य चिद्दमिता वीळुहर्षिणः ॥११॥

हे ब्रह्मणस्पतिदेव ! आपके समान दानदाता दूसरा कोई नहीं है । आप बलशाली, युद्ध में जाने वाले (योद्धा, शत्रुओं को पीड़ित करने वाले, युद्ध में शत्रुओं को पराजित करने वाले, ऋण मुक्त करने वाले, पराक्रम से युक्त, शत्रुओं का दमन करने वाले तथा न्यायशील हैं॥११॥

अदेवेन मनसा यो रिषण्यति शासामुग्रो मन्यमानो जिघांसति ।
बृहस्पते मा प्रणक्तस्य नो वधो नि कर्म मन्युं दुरेवस्य शर्धतः ॥१२॥

हे बृहस्पतिदेव ! जो आसुरी वृत्ति के कारण हमारे लिए दुःख दायी है, निर्दयी है, अत्यन्त अहंकारी रूप में स्तोताओं का हनन करना चाहता

है, उसके हथियार हमें स्पर्श न करें । कुमार्गगामी बलवान् व्यक्ति के क्रोध को हम नष्ट करें॥१२॥

भरेषु हव्यो नमसोपसद्यो गन्ता वाजेषु सनिता धनंधनम् ।
विश्वा इदर्यो अभिदिप्स्वो मृधो बृहस्पतिर्वि ववर्हा रथाँ इव ॥१३॥

युद्ध में सहायता के लिए आदर-पूर्वक बुलाने योग्य बृहस्पतिदेव सभी प्रकार का ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, वे स्तुत्य हैं । शत्रु सेनाओं को नष्ट करने की कामना वाले बृहस्पतिदेव शत्रु के रथों के समान ही हिंसक शत्रुओं का संहार करें॥१३॥

तेजिष्ठया तपनी रक्षसस्तप ये त्वा निदे दधिरे दृष्टवीर्यम् ।
आविस्तत्कृष्व यदसत्त उक्थ्यं बृहस्पते वि परिरापो अर्दय ॥१४॥

हे बृहस्पतिदेव ! आपके दृष्टिगोचर होने वाले पराक्रम की जो निन्दा करते हैं, आप उन दुष्ट प्रकृति वालों को अपने तेजस्वी ताप से पीड़ित करें । आपका पराक्रम सराहनीय हैं, उसे प्रकट करके चारों ओर व्याप्त शत्रुओं का संहार करें॥१४॥

बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद्द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु ।
यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ॥१५॥

हे ख्याति प्राप्त धर्मज्ञ बृहस्पति देव ! ज्ञानी जनों द्वारा सम्माननीय,मनुष्यों में तेजस्वी कर्म के रूप में प्रतिफलित होने वाले, देदीप्यमान सर्वोत्तम तथा अलौकिक ऐश्वर्य हमें प्रदान करें॥१५॥

मा नः स्तेनेभ्यो ये अभि द्रुहस्पदे निरामिणो रिपवोऽन्नेषु जागृधुः ।

आ देवानामोहते वि व्रयो हृदि बृहस्पते न परः साम्नो विदुः ॥१६॥

हे बृहस्पतिदेव ! जो द्रोही शत्रु आक्रमण करके अन्नादि पदार्थों की कामना करते हैं, देवगणों के प्रति द्वेष भाव रखते हैं तथा श्रेष्ठ सुखकारी वचन भी नहीं जानते, ऐसे चोर पुरुषों से हमें भय न हो॥१६॥

विश्वेभ्यो हि त्वा भुवनेभ्यस्परि त्वष्टाजनत्साम्नःसाम्नः कविः ।
स ऋणचिदृणया ब्रह्मणस्पतिर्द्रुहो हन्ता मह ऋतस्य धर्तरि ॥१७॥

हे ब्रह्मणस्पतिदेव ! प्रजापति ने आपको सम्पूर्ण भुवनों में सर्वश्रेष्ठ बनाया है, अत: आप प्रत्येक साम के ज्ञाता हैं। महान् यज्ञ के धारण कर्ता स्तोताओं को ऋण से मुक्ति दिलाकर, द्रोहकारियों का विनाश करते हैं॥१७॥

तव श्रिये व्यजिहीत पर्वतो गवां गोत्रमुदसृजो यदङ्गिरः ।
इन्द्रेण युजा तमसा परीवृतं बृहस्पते निरपामौब्जो अर्णवम् ॥१८॥

हे अंगिरावंशी बृहस्पतिदेव ! जब गौओं को पर्वतों ने छिपाया था और आपने उन गौओं को बाहर निकालकर आश्रय प्रदान किया था, तब इन्द्रदेव की मदद से वृत्र द्वारा रोके गये जल को बरसने के लिए आपने प्रेरित किया॥१८॥

ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता सूक्तस्य बोधि तनयं च जिन्व ।
विश्वं तद्भद्रं यदवन्ति देवा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥१९॥

हे ब्रह्मणस्पतिदेव ! आप सम्पूर्ण जगत् के नियन्ता हैं । आप इस सूक्त के ज्ञाता हैं । देवगणों का संरक्षण जिन्हें प्राप्त होता है, उनका सब प्रकार से कल्याण होता है । आप हमारी सन्तति को परिपुष्ट बनायें, जिससे हम यज्ञ में सुसन्तति सहित आपकी महिमा का गायन कर सकें॥१९॥

सूक्त २४

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- ब्रह्मणस्पतिः १, १० बृहस्पतिः, १२ इंद्रा ब्रह्मणस्पतिः। छंद- जगती, १२, १६ त्रिष्टुप

सेमामविड्ढि प्रभृतिं य ईशिषेऽया विधेम नवया महा गिरा ।
यथा नो मीढ्वान्स्तवते सखा तव बृहस्पते सीषधः सोत नो मतिम् ॥१॥

हे बृहस्पतिदेव ! आप सम्पूर्ण विश्व के स्वामी हैं, हम महान् स्तुतियों के द्वारा आपका यशोगान करते हैं, उन्हें ग्रहण करें । जो स्तोता आपकी मित्र भाव से स्तुतियाँ करते हैं, वे हमें सद्बुद्धि प्रदान करें॥१॥

यो नन्त्वान्यनमन्योजसोतादर्दर्मन्युना शम्बराणि वि ।
प्राच्यावयदच्युता ब्रह्मणस्पतिरा चाविशद्वसुमन्तं वि पर्वतम् ॥२॥

ब्रह्मणस्पतिदेव ने अपनी सामर्थ्य से दण्डित करने योग्य शत्रुओं को दबाया, मन्यु के द्वारा शम्बर को विदीर्ण किया, न गिरने वाले (जल) को गिराया तथा जहाँ गौएँ छिपी थीं, उस पर्वत में प्रवेश किया॥२॥

तद्देवानां देवतमाय कर्त्वमश्रथ्नन्दव्ह्राव्रदन्त वीळिता ।
उद्ना आजदभिनद्ब्रह्मणा वलमगूहत्तमो व्यचक्षयत्स्वः ॥३॥

देवों में सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मणस्पतिदेव के कर्तृत्व से सुदृढ़ किले भी शिथिल हो जाते हैं तथा बलशाली भी नम्र होकर झुक जाते हैं । ब्रह्मणस्पतिदेव ने मंत्र शक्ति के द्वारा बलासुर को मारकर गौओं को मुक्त कराया । सूर्यदेव को प्रकट करके अन्धकार को नष्ट किया॥३॥

अश्मास्यमवतं ब्रह्मणस्पतिर्मधुधारमभि यमोजसातृणत् ।
तमेव विश्वे पपिरे स्वर्दृशो बहु साकं सिसिचुरुत्समुद्रिणम् ॥४॥

ब्रह्मणस्पतिदेव ने पत्थर जैसे दृढ़ मुखवाले मधुर धाराओं से युक्त मेघ को बल प्रयोग द्वारा बरसने के लिए प्रेरित किया । वृष्टि के जल का पान सूर्य रश्मियों ने किया तथा प्रचुर जलधारा के रूप में (धरती पर) बरसाया॥४॥

सना ता का चिद्भुवना भवीत्वा माद्भिः शरद्भिर्दुरो वरन्त वः ।
अयतन्ता चरतो अन्यदन्यदिद्या चकार वयुना ब्रह्मणस्पतिः ॥५॥

हे ऋत्विज ! ब्रह्मणस्पतिदेव ने तुम्हारे लिए ही अनादि काल से प्रत्येक माह और प्रत्येक वर्ष, वर्षा के लिए मेघों को प्रेरित किया । इस प्रकार द्यावा-पृथिवी दोनों परस्पर जल का उपभोग करते हैं॥५॥

अभिनक्षन्तो अभि ये तमानशुर्निधिं पणीनां परमं गुहा हितम् ।
ते विद्वांसः प्रतिचक्ष्यानृता पुनर्यत उ आयन्तदुदीयुराविशम् ॥६॥

'पणियों ' के द्वारा गुहा में छिपाये गये श्रेष्ठ धन को चारों ओर खोज कर देवगणों ने प्राप्त किया । यज्ञीय कार्य में विघ्न पैदा करने वाले राक्षस उस दिव्य ऐश्वर्य को देखकर, जिस स्थान से आये थे, वापस लौट गये॥६॥

ऋतावानः प्रतिचक्ष्यानृता पुनरात आ तस्थुः कवयो महस्पथः ।
ते बाहुभ्यां धमितमग्निमश्मनि नकिः षो अस्त्यरणो जहुर्हि तम् ॥७॥

सर्वज्ञाता तथा सत्यवादियों ने माया की शक्तियों को देखा । वे वहाँ से हटकर विवेक पूर्वक महान् कार्यों के पथ पर चल पड़े । यज्ञीय कार्य के निमित्त उत्पन्न की गयी अग्नि को वहीं (पर्वत में ही छोड़ दिया॥७॥

ऋतज्येन क्षिप्रेण ब्रह्मणस्पतिर्यत्र वष्टि प्र तदश्नोति धन्वना ।
तस्य साध्वीरिषवो याभिरस्यति नृचक्षसो दृशये कर्णयोनयः ॥८॥

ब्रह्मणस्पतिदेव के पास सुगमता से खिंचने वाली डोरी वाला (बुद्धि रूपी) एक उत्तम धनुष है, जिससे वे (ज्ञानरूपी) बाणों को जहाँ (बुद्धिमान जनों के कानों तक) वे चाहते हैं, पहुँचा देते हैं । इससे वे मनुष्यों के सभी संकटों और दुष्ट भावों को उखाड़ फेंकते हैं॥८॥

स संनयः स विनयः पुरोहितः स सुष्टुतः स युधि ब्रह्मणस्पतिः ।
चाक्ष्मो यद्वाजं भरते मती धनादित्सूर्यस्तपति तप्यतुर्वृथा ॥९॥

वे स्तुत्य ब्रह्मणस्पतिदेव युद्ध में अग्रणी होकर संगठित रूप से आक्रमण करते हैं । सर्वदर्शी ब्रह्मणस्पतिदेव जब अन्न और धन को धारण करते हैं, तब स्वाभाविक रूप से सूर्य उदित हो जाता है॥९॥

विभु प्रभु प्रथमं मेहनावतो बृहस्पतेः सुविदत्राणि राध्या ।
इमा सातानि वेन्यस्य वाजिनो येन जना उभये भुञ्जते विशः ॥१०॥

व्यापक सामर्थ्य प्रदान करने वाला, सब प्रकार सुखदायी, सिद्धिदायीं यह धन महाबलशाली बृहस्पतिदेव ने सबके द्वारा चाहे जाने पर बरसाया है । जिसका भोग दोनों प्रकार की (ज्ञानी और अज्ञानी) प्रजायें करती हैं॥१०॥

योऽवरे वृजने विश्वथा विभुर्महामु रण्वः शवसा ववक्षिथ ।
स देवो देवान्प्रति पप्रथे पृथु विश्वेदु ता परिभूर्ब्रह्मणस्पतिः ॥११॥

सर्वव्यापी, आनन्ददायी ब्रह्मणस्पतिदेव प्रत्येक युद्ध में अपनी सामर्थ्य से अपनी महत्ता को प्रकट करते हैं । सभी देवों से श्रेष्ठ ब्रह्मणस्पतिदेव समस्त विश्व में संव्याप्त रहते हैं॥११॥

विश्वं सत्यं मघवाना युवोरिदापश्चन प्र मिनन्ति व्रतं वाम् ।
अच्छेन्द्राब्रह्मणस्पती हविर्नोऽन्नं युजेव वाजिना जिगातम् ॥१२॥

हे ऐश्वर्यसम्पन्न इन्द्रदेव और हे ब्रह्मणस्पतिदेव !आप दोनों सत्यव्रत धारी हैं । आप दोनों के कर्तव्य और नियम अडिग हैं । जुए में जुड़े अश्वों के समान आप दोनों हमारे हविष्यान्न को ग्रहण करने के लिए (यज्ञ स्थल में) आयें॥१२॥

उताशिष्ठा अनु शृण्वन्ति वह्नयः सभेयो विप्रो भरते मती धना ।
वीळुद्वेषा अनु वश ऋणमाददिः स ह वाजी समिथे ब्रह्मणस्पतिः
॥१३॥

युद्ध में बलशाली ब्रह्मणस्पतिदेव सभ्य ज्ञानी जनों के उत्तम धन को ही स्वीकार करते हैं और बलशाली शत्रुओं से द्वेष करते हैं । द्रुतगति से जाने वाले अश्व भी (उनकी बात सुनते हैं । वे ऋण से उऋण करते हैं॥१३॥

ब्रह्मणस्पतेरभवद्यथावशं सत्यो मन्युर्महि कर्मा करिष्यतः ।
यो गा उदाजत्स दिवे वि चाभजन्महीव रीतिः शवसासरत्पृथक्
॥१४॥

महान् कार्य में निरत ब्रह्मणस्पतिदेव का कार्य उनकी अभिलाषा के अनुसार सफल होता है । ब्रह्मणस्पतिदेव ने गौओं को बाहर निकाल कर विजय प्राप्त की । सतत प्रवाहित नदियों की भाँति ये गौएँ स्वतंत्र रूप से चली गयीं॥१४॥

ब्रह्मणस्पते सुयमस्य विश्वहा रायः स्याम रथ्यो वयस्वतः ।
वीरेषु वीराँ उप पृङ्धि नस्त्वं यदीशानो ब्रह्मणा वेषि मे हवम् ॥१५॥

हे ब्रह्मणस्पतिदेव ! हम सभी व्रतों के पालक तथा अन्न युक्त धन के सदैव अधिपति रहें । आप सभी के नियन्ता हैं, अत: ज्ञान पूर्वक की गयी हमारी स्तुतियों को स्वीकार करके हमें पराक्रमी सन्तति प्रदान करें॥१५॥

ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता सूक्तस्य बोधि तनयं च जिन्व ।

विश्वं तद्भद्रं यदवन्ति देवा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥१६॥

हे संसार के नियन्ता ब्रह्मणस्पतिदेव ! देवगण जिसे अपना संरक्षण प्रदान करते हैं, उसका हर प्रकार से कल्याण होता है; अतः आप हमारे सूक्त को जानकर हमारे पुत्रों को परिपुष्ट बनायें, ताकि उत्तम सन्तति से युक्त होकर हम यज्ञ में आपकी महिमा का गान कर सकें॥१६॥

सूक्त २५

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- ब्रह्मणस्पति: । छंद- जगती

इन्धानो अग्निं वनवद्वनुष्यतः कृतब्रह्मा शूशुवद्रातहव्य इत् ।
जातेन जातमति स प्र सर्सृते यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः ॥१॥

जिसे ब्रह्मणस्पतिदेव सखा बना लेते हैं, वह अग्नि को प्रज्वलित करके शत्रुओं का संहार करने में समर्थ होता है तथा ज्ञानवान् बनकर हवि प्रदान करके समृद्धि प्राप्त करता है । पुत्र- पौत्रों, से उसकी वृद्धि होती है॥१॥

वीरेभिर्वीरान्वनवद्वनुष्यतो गोभी रयिं पप्रथद्बोधति त्मना ।
तोकं च तस्य तनयं च वर्धते यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः ॥२॥

जिस यजमान को ब्रह्मणस्पतिदेव अपने सखा रूप में स्वीकार कर लेते हैं, वह अपने बलशाली पुत्रों के द्वारा हिंसक शत्रु के वीर पुत्रों को मारता है । वह गोधन से समृद्ध होता हुआ ज्ञानवान् बनता है । ब्रह्मणस्पतिदेव उसे पुत्र-पौत्रों से समृद्ध बनाते हैं॥२॥

सिन्धुर्न क्षोदः शिमीवाँ ऋघायतो वृषेव वध्रीँरभि वष्ट्योजसा ।

अग्नेरिव प्रसितिर्नाह वर्तवे यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः ॥३॥

जिस यजमान को ब्रह्मणस्पतिदेव अपने सखा रूप में स्वीकार कर लेते हैं, वह जिस प्रकार नदी तटबन्ध को तोड़ती है, साँड, बैल को पराजित करता है, उसी तरह अपनी सामर्थ्य से हिंसक शत्रुओं को पराजित करता है । ऐसा यजमान अग्नि की ज्वालाओं के समान किसी से रोका नहीं जा सकता॥३॥

तस्मा अर्षन्ति दिव्या असश्चतः स सत्वभिः प्रथमो गोषु गच्छति ।
अनिभृष्टतविषिर्हन्त्योजसा यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः ॥४॥

जिस यजमान को ब्रह्मणस्पतिदेव अपने सखा के रूप में स्वीकार कर लेते हैं, उसे दैवी सामर्थ्य सतत मिलती रहती है । वह सत्यनिष्ठ व्यक्तियों के साथ सबसे पहले गोधन प्राप्त करता है । युद्ध में शत्रुओं का संहार करते हुए सदैव अजेय रहता है॥४॥

तस्मा इद्विश्वे धुनयन्त सिन्धवोऽच्छिद्रा शर्म दधिरे पुरूणि ।
देवानां सुम्ने सुभगः स एधते यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः ॥५॥

जिस यजमान को ब्रह्मणस्पतिदेव अपने सखा के रूप में स्वीकार कर लेते हैं, सारी नदियों का प्रवाह उसके अनुकूल होता है । वह सतत अनेकानेक सुखों का भोग करता है । वह सौभाग्यशाली यजमान देवों के द्वारा प्रदत्त सुख तथा समृद्धि प्राप्त करता है॥५॥

सूक्त २६

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- ब्रह्मणस्पतिः । छंद- जगती

ऋजुरिच्छंसो वनवद्वनुष्यतो देवयन्निददेवयन्तमभ्यसत् ।
सुप्रावीरिद्वनवत्पृत्सु दुष्टरं यज्वेदयज्योर्वि भजाति भोजनम् ॥१॥

ब्रह्मणस्पतिदेव की स्तुति करने वाले सज्जन स्तोता ही देवगणों का पूजन करते हैं तथा देवगणों को न मानने वालों एवं हिंसकों का संहार करते हैं । उत्तम संरक्षण प्रदान करने वाले वे ब्रह्मणस्पतिदेव युद्ध में दुर्धर्ष शत्रुओं को मारते हैं । याज्ञिक(श्रेष्ठ कार्य करने वाले) ही यज्ञन करने वाले(कुसंगी) व्यक्तियों के ऐश्वर्य का उपभोग करते हैं॥१॥

यजस्व वीर प्र विहि मनायतो भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये ।
हविष्कृणुष्व सुभगो यथाससि ब्रह्मणस्पतेरव आ वृणीमहे ॥२॥

हे मनुष्यो ! यज्ञ के द्वारा अहंकारी शत्रुओं का विनाश करो । विघ्नों को नष्ट करने के लिए मंगलमय विचारों से जुड़कर ब्रह्मणस्पतिदेव के संरक्षण की कामना से हविष्यान्न तैयार करो, जिससे सौभाग्यशाली बन सको॥२॥

स इज्जनेन स विशा स जन्मना स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः ।
देवानां यः पितरमाविवासति श्रद्धामना हविषा ब्रह्मणस्पतिम् ॥३॥

जो याजक श्रद्धाभावना से देवों के पालनकर्ता ब्रह्मणस्पतिदेव को हुव्य समर्पित करता है, वह व्यक्तियों द्वारा, समाज द्वारा तथा सन्तति द्वारा ऐश्वर्य की प्राप्ति करता है और मनुष्य मात्र का सहयोग पाता है॥३॥

यो अस्मै हव्यैर्घृतवद्भिरविधत्प्र तं प्राचा नयति ब्रह्मणस्पतिः ।
उरुष्यतीमंहसो रक्षती रिषोंऽहोश्चिदस्मा उरुचक्रिरद्भुतः ॥४॥

जो याजक यज्ञ में ब्रह्मणस्पतिदेव के निमित्त घृत युक्त हव्य से आहुतियाँ समर्पित करता है, उसे ब्रह्मणस्पतिदेव उत्तम संरक्षण प्रदान करते हैं, पाप से बचाते हैं, दारिद्य आदि कष्ट से रक्षा करते हैं और देवत्व के मार्ग में बढ़ाते हुए अद्भुत महान् बना देते हैं॥४॥

सूक्त २७

ऋषि:- कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा
देवता- आदित्य: । छंद- त्रिष्टुप

इमा गिर आदित्येभ्यो घृतस्नूः सनाद्राजभ्यो जुह्वा जुहोमि ।
शृणोतु मित्रो अर्यमा भगो नस्तुविजातो वरुणो दक्षो अंशः ॥१॥

तेजस्वी आदित्यगण के लिए जुहू पात्र द्वारा घृत का सिंचन करते हुए हम स्तुतियाँ करते हैं । मित्रदेव, अर्यमादेव, भगदेव, सर्वव्यापी वरुणदेव, दक्ष तथा अंश आदि देवगण हमारी स्तुतियों को ग्रहण करें॥१॥

इमं स्तोमं सक्रतवो मे अद्य मित्रो अर्यमा वरुणो जुषन्त ।
आदित्यासः शुचयो धारपूता अवृजिना अनवद्या अरिष्टाः ॥२॥

कुटिलता से रहित, अनिन्दित आचार वाले, हिंसा न करने वाले व हिंसित न होने वाले यशस्वी आदित्यगण तथा मित्र, वरुण और अर्यमा देवगण हमारे स्नेह युक्त स्तोत्रों को आज श्रवण करें॥२॥

त आदित्यास उरवो गभीरा अदब्धासो दिप्सन्तो भूर्यक्षाः ।
अन्तः पश्यन्ति वृजिनोत साधु सर्वं राजभ्यः परमा चिदन्ति ॥३॥

महान् गंभीर, दमन करने में समर्थ, दुष्टों को दण्ड देने वाले, हजारों आँखों वाले, आदित्य देव समस्त प्राणियों के अन्त:करण की कुटिलता व सज्जनता को देखते हैं । इनके लिए दूर में स्थित पदार्थ भी निकट ही हैं॥३॥

धारयन्त आदित्यासो जगत्स्था देवा विश्वस्य भुवनस्य गोपाः ।
दीर्घाधियो रक्षमाणा असुर्यमृतावानश्चयमाना ऋणानि ॥४॥

स्थावर-जंगम सभी को धारण करते हुए ये आदित्यगण सम्पूर्ण संसार की रक्षा करते हैं । विशाल बुद्धि वाले ये देवगण सत्य मार्ग पर चलने वाले स्तोताओं के ऋणों को दूर करते तथा अन्न, जल और धन की रक्षा करते हैं॥४॥

विद्यामादित्या अवसो वो अस्य यदर्यमन्भय आ चिन्मयोभु ।
युष्माकं मित्रावरुणा प्रणीतौ परि श्वभ्रेव दुरितानि वृज्याम् ॥५॥

हे आदित्यगण ! किसी भी प्रकार का संकट आने पर हम आपका सुखदायी संरक्षण प्राप्त करें । हे अर्यमा, मित्र तथा वरुणदेवो ! गड्ढ़े वाली उबड़-खाबड़ जमीन की भाँति हमे पाप कर्मों को छोड़ दें॥५॥

सुगो हि वो अर्यमन्मित्र पन्था अनृक्षरो वरुण साधुरस्ति ।
तेनादित्या अधि वोचता नो यच्छता नो दुष्परिहन्तु शर्म ॥६॥

हे अर्यमादेव, मित्रदेव तथा वरुण देव ! आप हमें विघ्नों से रहित, सरल तथा सुगमता से जाने योग्य मार्ग से ले चलें । हे आदित्यगण ! आप

हमें सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हुए कभी नष्ट न होने वाला सुख प्रदान करें॥६॥

पिपर्तु नो अदिती राजपुत्राति द्वेषांस्यर्यमा सुगेभिः ।
बृहन्मित्रस्य वरुणस्य शर्मोप स्याम पुरुवीरा अरिष्टाः ॥७॥

हे तेजस्वी पुत्रों वाली (देवों की माता अदिति तथा अर्यमादेव ! हमें द्वेषकारी शत्रुओं को लाँघकर जाने का सुगम मार्ग दिखायें । हम मित्रदेव तथा वरुणदेव के संरक्षण में शत्रुओं से पीड़ित न होते हुए सुसन्तति सहित महान् सुख की प्राप्ति करें॥७॥

तिस्रो भूमीर्धारयन्त्रीँरुत द्यून्त्रीणि व्रता विदथे अन्तरेषाम् ।
ऋतेनादित्या महि वो महित्वं तदर्यमन्वरुण मित्र चारु ॥८॥

ये आदित्यगण तीन भूमियों (चुलोक, पृथिवीं लोक तथा अन्तरिक्ष लोक) को तीन प्रकाशों (अग्नि, विद्युत् और सूर्य) सहित धारण करते हैं । ये सभी यज्ञीय व्रतों (अनुशासन) के पालक हैं । हे आदित्यगण ! आप लोगों की महान् सामर्थ्य यज्ञ पर ही आधारित है । हे मित्र, वरुण और अर्यमा देव ! आपकी महानता सर्वश्रेष्ठ है॥८॥

त्री रोचना दिव्या धारयन्त हिरण्ययाः शुचयो धारपूताः ।
अस्वप्नजो अनिमिषा अदब्धा उरुशंसा ऋजवे मर्त्याय ॥९॥

सुवर्णालंकारों से अलंकृत, तेजवान्, परम पवित्र, निद्रारहित, आँख न झपकने वाले, यशस्वी, हिंसा रहित तथा मनुष्यों के हितकारी आदित्यगण तीनों दिव्य (अग्नि, वायु तथा सूर्य) शक्तियों को, धर्म मार्ग पर चलने वाले मनुष्यों के लिए धारण करते हैं॥९॥

त्वं विश्वेषां वरुणासि राजा ये च देवा असुर ये च मर्ताः ।
शतं नो रास्व शरदो विचक्षेऽश्यामायूंषि सुधितानि पूर्वा ॥१०॥

हे मादक पदार्थों से रहित वरुण देव ! आप देवता तथा मनुष्य सभी के राजा हैं । हमें इस संसार को भली-भाँति देखने के लिए सौ वर्ष की आयु प्रदान करें॥१०॥

न दक्षिणा वि चिकिते न सव्या न प्राचीनमादित्या नोत पश्चा ।
पाक्या चिद्वसवो धीर्या चिद्युष्मानीतो अभयं ज्योतिरश्याम् ॥११॥

हे आदित्यगण ! हम आगे, पीछे, बायें, दायें क्या है, यह नहीं जानते ? सबके आश्रयदाता आदित्यगण ! हम परिपक्व बुद्धि तथा धैर्यवान् होकर आपके द्वारा दिखाये गये पथ में चलते हुए भय रहित ज्योति प्राप्त कर सकें॥११॥

यो राजभ्य ऋतनिभ्यो ददाश यं वर्धयन्ति पुष्टयश्च नित्याः ।
स रेवान्याति प्रथमो रथेन वसुदावा विदथेषु प्रशस्तः ॥१२॥

जो तेजस्वी याजकों को धन प्रदान करता है, जो सदैव समृद्धिशाली रूप में वृद्धि पाता है, वह स्तुत्य, धन प्रदाता धनिक रथ में प्रतिष्ठित रथी के समान श्रेष्ठ कार्यों में सदैव अग्रणी रहता है॥१२॥

शुचिरपः सूयवसा अदब्ध उप क्षेति वृद्धवयाः सुवीरः ।
नकिष्टं घ्नन्त्यन्तितो न दूराद्य आदित्यानां भवति प्रणीतौ ॥१३॥

जो आदित्यगणों का पथानुगामी होता है, वह दीप्तिमान्, हिंसा रहित, उत्तम संतति से युक्त, दीर्घायु, पोषक अन्न तथा श्रेष्ठ कर्मों को प्राप्त करता है । उसका समीप से या दूर से कोई शत्रु वध नहीं कर सकता॥१३॥

अदिते मित्र वरुणोत मृळ यद्वो वयं चकृमा कच्चिदागः ।
उर्वश्यामभयं ज्योतिरिन्द्र मा नो दीर्घा अभि नशन्तमिस्राः ॥१४॥

हे अदिति, मित्र तथा वरुण देवो ! यदि हमसे कोई अपराध भी बन पड़े तो भी आप हमें क्षमा करें । हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! दीर्घ अन्धकार हमें न व्याप्त करे, अत: विस्तीर्ण तथा अभय ज्योति हमें प्रदान करें॥१४॥

उभे अस्मै पीपयतः समीची दिवो वृष्टिं सुभगो नाम पुष्यन् ।
उभा क्षयावाजयन्याति पृत्सूभावर्धौ भवतः साधू अस्मै ॥१५॥

(जो व्यक्ति आदित्यगणों का अनुगमन करता है । उसे द्युलोक तथा पृथिवी लोक दोनों परिपुष्ट बनाते हैं । द्युलोक से हुई ऐश्वर्य वृष्टि को वह सौभाग्यशाली प्राप्त करता है । वह युद्ध में शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता हुआ दोनों लोकों में जाता है तथा दोनों लोक उसके लिए मंगलदायी होते हैं॥१५॥

या वो माया अभिद्रुहे यजत्राः पाशा आदित्या रिपवे विचृत्ताः ।
अश्वीव ताँ अति येषं रथेनारिष्टा उरावा शर्मन्त्स्याम ॥१६॥

हे आदित्यगण ! जिस तरह घुड़सवार कठिन रास्ते को सुगमता से पार करता है, उसी तरह शत्रुओं के लिए आपके द्वारा बनाये गये

पाशों को हम सरलता से लाँध जाये । हम निर्विघ्न सुखमय विशाल गृह में निवास करें॥१६॥

माहं मघोनो वरुण प्रियस्य भूरिदाव्न आ विदं शूनमापेः ।
मा रायो राजन्त्सुयमादव स्थां बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥१७॥

हे वरुणदेव ! सबको सन्तुष्ट करने वाले ऐश्वर्यवान् दानदाता की सुख-समृद्धि से कभी ईष्र्या न करें, उसे बन्धुवत् मानें । हे वरुण देव ! आवश्यक धन प्राप्त होने पर हम अहंकारी न बनें, श्रेष्ठ सन्तति सहित यज्ञ में देवों की स्तुतियाँ करें॥१७॥

सूक्त २८

ऋषि:- कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा
देवता- वरुण: । छंद- त्रिष्टुप

इदं कवेरादित्यस्य स्वराजो विश्वानि सान्त्यभ्यस्तु मह्ना ।
अति यो मन्द्रो यजथाय देवः सुकीर्तिं भिक्षे वरुणस्य भूरेः ॥१॥

स्वयं प्रकाशित होने वाले आदित्यगण अपनी सामर्थ्य से सभी विनाशकारी शक्तियों को दूर करें, ये स्तोत्र उन दूरदर्शी आदित्यगण के लिए हैं । याज्ञिकों के लिए अत्यन्त सुखदायी, पोषणकारी वरुणदेव की स्तुतियों के द्वारा हम प्रार्थना करते हैं॥१॥

तव व्रते सुभगासः स्याम स्वाध्यो वरुण तुष्टुवांसः ।
उपायन उषसां गोमतीनामग्नयो न जरमाणा अनु द्यून् ॥२॥

हे वरुणदेव ! आपका अनुगमन करते हुए हम सौभाग्यशाली बनें । किरण युक्त उषा के समय प्रतिदिन आपकी स्तुतियाँ करते हुए हम स्तोताजन श्रेष्ठ बुद्धि से युक्त होकर अग्नि के समान तेजस्वी बनें॥२॥

तव स्याम पुरुवीरस्य शर्मन्नुरुशंसस्य वरुण प्रणेतः ।
यूयं नः पुत्रा अदितेरदब्धा अभि क्षमध्वं युज्याय देवाः ॥३॥

हे श्रेष्ठनायक वरुणदेव ! आप बहुतों के द्वारा प्रशंसित हैं । हम वीर सन्तति से युक्त होकर आपके आश्रय में रहें । हे अबध्य पुत्रो ! हम आपसे मित्र भाव की कामना करते हुए अपने अपराधों तथा पापों के लिए क्षमा याचना करते हैं॥३॥

प्र सीमादित्यो असृजद्विधर्ताँ ऋतं सिन्धवो वरुणस्य यन्ति ।
न श्राम्यन्ति न वि मुचन्त्येते वयो न पप्तू रघुया परिज्मन् ॥४॥

समस्त विश्व को धारण करने वाले अदिति पुत्र वरुणदेव ने जल को वृष्टि रूप में उत्पन्न करके अपनी सामर्थ्य से नदियों को प्रवाहित किया, जो पक्षी की भाँति अविरल गति से पृथ्वी पर विचरण कर रही हैं॥४॥

वि मच्छ्रथाय रशनामिवाग ऋध्याम ते वरुण खामृतस्य ।
मा तन्तुश्छेदि वयतो धियं मे मा मात्रा शार्यपसः पुर ऋतोः ॥५॥

हे वरुणदेव ! हमारे पापों ने हमें रस्सी की भाँति जकड़ रखा है, उनसे हमें छुड़ायें, ताकि श्रेष्ठ मार्ग में गमनशील आपकी सामर्थ्य को हम धारण कर सकें । जिस तरह बुनाई करने वाले का तागा नहीं टूटना चाहिए, उसी प्रकार श्रेष्ठ कार्यों के नियोजन के समय आपकी शक्ति अविरल गति से प्राप्त होती रहे । कार्य की समाप्ति के पूर्व हीं हमारी शक्ति क्षीण न हो॥५॥

अपो सु म्यक्ष वरुण भियसं मत्सम्राळृतावोऽनु मा गृभाय ।
दामेव वत्साद्वि मुमुग्ध्यंहो नहि त्वदारे निमिषश्चनेशे ॥६॥

हे सत्यरक्षक, तेजस्वी वरुणदेव !हमारे ऊपर कृपा बनाये रखकर, भय से हमें दूर करें । जिस प्रकार रस्सी से बछड़े को मुक्त करते हैं, उसी प्रकार हमें पापों से मुक्त करें; क्योंकि आपके अभाव में हमारा कोई अस्तित्व नहीं है॥६॥

मा नो वधैर्वरुण ये त इष्टावेनः कृण्वन्तमसुर भ्रीणन्ति ।
मा ज्योतिषः प्रवसथानि गन्म वि षू मृधः शिश्रथो जीवसे नः ॥७॥

हे प्राणों के रक्षक वरुणदेव ! दुष्टों को नष्ट करने वाले आयुधों का हम पर कोई प्रभाव न हो । हमारे जीवन को सुखमय बनाने के लिए हिंसक शत्रुओं को नष्ट करें तथा हम लोग प्रकाश से दूर न जायें॥७॥

नमः पुरा ते वरुणोत नूनमुतापरं तुविजात ब्रवाम ।
त्वे हि कं पर्वते न श्रितान्यप्रच्युतानि दूळभ व्रतानि ॥८॥

हे अनेक दुर्लभ शक्तियों से सम्पन्न वरुणदेव ! आपके अटूट नियम पर्वत के समान अचल तथा दृढ़ता से स्थिर रहते हैं । हम भूतकाल में आपको नमन करते रहे हैं, इस समय भी नमन करते हैं तथा भविष्य में भी नमन करते रहेंगे॥८॥

पर ऋणा सावीरध मत्कृतानि माहं राजन्नन्यकृतेन भोजम् ।
अव्युष्टा इन्नु भूयसीरुषास आ नो जीवान्वरुण तासु शाधि ॥९॥

हे वरुणदेव ! हमें ऋण मुक्त करें । दूसरों के द्वारा अर्जित की गयी सम्पत्ति का ह्म उपभोग न करें । बहुत सी उषाएँ (जीवन में प्रकाश देने वाली धाराएँ जो प्रकाशित हो सकीं, उनसे हमारे जीवन को सुखमय बनायें॥९॥

यो मे राजन्युज्यो वा सखा वा स्वप्ने भयं भीरवे मह्यमाह ।
स्तेनो वा यो दिप्सति नो वृको वा त्वं तस्माद्वरुण पाह्यस्मान् ॥१०॥

हे तेजस्वी वरुणदेव ! जो हमारे बन्धु स्वप में हमें भयभीत करते हैं या भेड़िये के समान हमें नष्ट करना चाहते हैं, उनसे हमारी रक्षा करें॥१०॥

माहं मघोनो वरुण प्रियस्य भूरिदाञ्न आ विदं शूनमापेः ।
मा रायो राजन्त्सुयमादव स्थां बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥११॥

हे वरुणदेव ! सबको सन्तुष्ट करने वाले, ऐश्वर्यशाली दानदाता की सुख-समृद्धि से हम कभी ईर्ष्या न करें, उन्हें बन्धुवत् मानें । हे वरुणदेव ! आवश्यक धन प्राप्त होने पर हम अहंकारी न बनें, श्रेष्ठ सन्तति सहित यज्ञ में देवों की स्तुतियाँ करें॥११॥

सूक्त २९

ऋषि:- कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा
देवता- विश्वेदेवा : । छंद- त्रिष्टुप

धृतव्रता आदित्या इषिरा आरे मत्कर्त रहसूरिवागः ।
शृण्वतो वो वरुण मित्र देवा भद्रस्य विद्वाँ अवसे हुवे वः ॥१॥

हे व्रतधारी, सर्वत्र गमनशील आदित्यगण ! गुप्त रहस्य की भाँति हमारे पापों को हमसे दूर करें । हे मित्र एवं वरुणदेवो ! आपके मंगलकारी कार्यों को जानकर हम संरक्षण के लिए आपका आवाहन करते हैं, आप हमारी प्रार्थना को स्वीकार करें॥१॥

यूयं देवाः प्रमतिर्यूयमोजो यूयं द्वेषांसि सनुतर्युयोत ।
अभिक्षत्तारो अभि च क्षमध्वमद्या च नो मृळयतापरं च ॥२॥

हे देवगण ! आप श्रेष्ठ बुद्धि वाले हैं, तेजस्वी हैं तथा द्वेषियों के छल को प्रकट करने वाले हैं । आप शत्रुनाशक हैं; अतः शत्रुओं का संहार करें तथा हमारा वर्तमान और भविष्य सुखमय बनायें॥२॥

किमू नु वः कृणवामापरेण किं सनेन वसव आप्येन ।
यूयं नो मित्रावरुणादिते च स्वस्तिमिन्द्रामरुतो दधात ॥३॥

हे आश्रयदाता देवगण ! पूर्व में किये गये अपने कर्मों से हमें आपका किस प्रकार आदर सत्कार करें, हे मित्र, वरुण, अदिति, इन्द्र तथा मरुद्गणो ! आप सभी देवगण हमारा कल्याण करें॥३॥

हये देवा यूयमिदापयः स्थ ते मृळत नाधमानाय मह्यम् ।
मा वो रथो मध्यमवाळृते भून्मा युष्मावत्स्वापिषु श्रमिष्म ॥४॥

हे देवगणो ! आप ही हमारे हितैषी सखा हैं; अतः हम आपकी स्तुति करते हैं, आप हमें सुखी बनायें । हमारे यज्ञ में आपका रथ तीव्र गति से आये । हम आपके समान सखा पाकर सदैव स्तुतियाँ करते रहें, थकें नहीं॥४॥

प्र व एको मिमय भूर्यागो यन्मा पितेव कितवं शशास ।
आरे पाशा आरे अघानि देवा मा माधि पुत्रे विमिव ग्रभीष्ट ॥५॥

हे देवो ! आपने हमें पिता की भाँति उपदेश दिया है, अत: हमने अपने अनेकों पापों को नष्ट कर दिया है । हे देवो ! पाप तथा पाश हमसे दूर रहें । व्याध द्वारा पक्षी की तरह पुत्र के सामने (निर्दयतापूर्वक) हमें न पकड़े॥५॥

अर्वाञ्चो अद्या भवता यजत्रा आ वो हार्दि भयमानो व्ययेयम् ।
त्राध्वं नो देवा निजुरो वृकस्य त्राध्वं कर्तादवपदो यजत्राः ॥६॥

हे पूज्य देवगणो ! आप आज हमारे सामने प्रकट हों, भयभीत होकर हम आपके हृदय के समान प्रिय आश्रय को प्राप्त करें । हे पूज्य

देवगणो ! कष्टदायी दुष्ट शत्रुओं से आपत्ति काल में हमारी हर प्रकार से रक्षा करें॥६॥

माहं मघोनो वरुण प्रियस्य भूरिदाञ्न आ विदं शूनमापेः ।
मा रायो राजन्त्सुयमादव स्थां बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥७॥

हे वरुणदेव ! सबको सन्तुष्ट करने वाले ऐश्वर्यशाली दानदाता की सुख-समृद्धि से हम कभी ईष्र्या न करें, उन्हें बन्धुवत् मानें । हे वरुणदेव ! आवश्यक धन प्राप्त होने पर हम अहंकारी न बनें, श्रेष्ठ सन्तति सहित यज्ञ में देवों की स्तुतियाँ करें॥७॥

सूक्त ३०

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- इन्द्र, ६ इन्द्रसोमौ, ८ सरस्वती, ९ बृहस्पति, ११ मरुत: ।
छंद- त्रिष्टुप, ११ जगती

ऋतं देवाय कृण्वते सवित्र इन्द्रायाहिघ्ने न रमन्त आपः ।
अहरहर्यात्यक्तुरपां कियात्या प्रथमः सर्ग आसाम् ॥१॥

जल प्रेरक, तेजस्वी तथा सर्व प्रेरक वृत्रहन्ता, इन्द्रदेव के निमित्त यज्ञादिकर्म कभी भी नहीं रुकते । जब से यज्ञादि कर्म प्रचलित हुए, तब से याजकगण सदैव यज्ञ कर्म करते हैं॥१॥

यो वृत्राय सिनमत्राभरिष्यत्प्र तं जनित्री विदुष उवाच ।
पथो रदन्तीरनु जोषमस्मै दिवेदिवे धुनयो यन्त्यर्थम् ॥२॥

जो (इन्द्रदेव के शत्र) वृत्र के लिए अन्न प्रदान करता है, उसकी बात इन्द्रदेव से उनकी माता अदिति कह देती हैं । नदियाँ इन्द्रदेव की कामनानुसार अपना मार्ग बनाती हुई निरन्तर समुद्र की तरफ प्रवाहित होती हैं॥२॥

ऊर्ध्वो ह्यस्थादध्यन्तरिक्षेऽधा वृत्राय प्र वधं जभार ।

मिहं वसान उप हीमदुद्रोत्तिग्मायुधो अजयच्छत्रुमिन्द्रः ॥३॥

चूँकि अन्तरिक्ष में बहुत ऊँचे स्थित होकर मेघ से आच्छादित वृत्र ने इन्द्रदेव पर आक्रमण किया था, इसलिए इन्द्रदेव ने अपने वज्र को वृत्र के ऊपर फेंका और तीक्ष्ण आयुधधारी इन्द्रदेव ने वृत्र पर विजय प्राप्त किया॥३॥

बृहस्पते तपुषाश्नेव विध्य वृकद्वरसो असुरस्य वीरान् ।
यथा जघन्थ धृषता पुरा चिदेवा जहि शत्रुमस्माकमिन्द्र ॥४॥

हे बृहस्पतिदेव ! असुर पुत्रों को अपने विद्युत् के समान ताप देने वाले वज्र से छिन्न-भिन्न करें, प्रताड़ित करें । हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार प्राचीनकाल में आपने वज्र के द्वारा शत्रुओं पर विजय प्राप्त की थी, उसी तरह हमारे शत्रुओं को भी आज नष्ट करें॥४॥

अव क्षिप दिवो अश्मानमुच्चा येन शत्रुं मन्दसानो निजूर्वाः ।
तोकस्य सातौ तनयस्य भूरेरस्माँ अर्धं कृणुतादिन्द्र गोनाम् ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! स्तोताओं की स्तुतियों से प्रसन्न होकर आपने जिस वज्र से शत्रु का विनाश किया था, उसी वज्र को द्युलोक से हमारे शत्रुओं के ऊपर फेंकें । हमें भरण-पोषण के योग्य साधन तथा गोधन से समृद्ध बनायें, ताकि हम संतति का पालन-पोषण कर सकें॥५॥

प्र हि क्रतुं वृहथो यं वनुथो रध्रस्य स्थो यजमानस्य चोदौ ।
इन्द्रासोमा युवमस्माँ अविष्टमस्मिन्भयस्थे कृणुतमु लोकम् ॥६॥

हे इन्द्रदेव तथा सोमदेव ! आप दोनों स्तोता-यजमानों को चाहते हैं तथा उन्हें यज्ञ के विस्तार की प्रेरणा देते हैं । आप दोनों भययुक्त इस संसार में हम लोगों की रक्षा करें तथा हमारे जीवन को प्रकाशित करें॥६॥

न मा तमन्न श्रमन्नोत तन्द्रन्न वोचाम मा सुनोतेति सोमम् ।
यो मे पृणाद्यो ददद्यो निबोधाद्यो मा सुन्वन्तमुप गोभिरायत् ॥७॥

जो इन्द्रदेव हमें उत्तम ज्ञान तथा श्रेष्ठ धन प्रदान करके हमारी कामनाओं को पूरा करते हैं, जो सोम रस को शोधित करते समय हमारे पास गौओं सहित आते हैं, वे इन्द्रदेव हमें कष्ट न दें, श्रमशक्ति प्रदान करें तथा हमें आलसी न बनायें । हम भी कभी किसी से यह न कहें कि इन्द्रदेव के लिए सोमरस तैयार न करो॥७॥

सरस्वति त्वमस्माँ अविड्ढि मरुत्वती धृषती जेषि शत्रून् ।
त्यं चिच्छर्धन्तं तविषीयमाणमिन्द्रो हन्ति वृषभं शण्डिकानाम् ॥८॥

हे माँ सरस्वति ! मरुतों के साथ संयुक्त होकर दृढ़तापूर्वक हमारे शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके आप हमारी रक्षा करें । अहंकारी तथा अत्यधिक बलशाली शाण्डवंशी शण्डामर्क राक्षस को इन्द्रदेव ने मारा था॥८॥

यो नः सनुत्य उत वा जिघत्नुरभिख्याय तं तिगितेन विध्य ।
बृहस्पत आयुधैर्जेषि शत्रून्द्रुहे रीषन्तं परि धेहि राजन् ॥९॥

हे बृहस्पतिदेव ! हमारे बीच में जो छुपा हुआ हिंसक शत्रु हो, उसे खोजकर तीक्ष्ण शस्त्रों से छेदें । हमारे शत्रुओं पर शस्त्रास्त्रों से विजय

प्राप्त करें । हे राजा बृहस्पतिदेव ! हिंसक अस्त्र द्रोहकारियों के ऊपर फेंकें॥९॥

अस्माकेभिः सत्वभिः शूर शूरैर्वीर्या कृधि यानि ते कर्त्वानि ।
ज्योगभूवन्ननुधूपितासो हत्वी तेषामा भरा नो वसूनि ॥१०॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! हमारे बलशाली वीरों का सहयोग लेकर, करने योग्य पराक्रमी कार्यों को करें । अहंकारी शत्रुओं को मारें तथा उनका धन हमें प्रदान करें॥१०॥

तं वः शर्धं मारुतं सुम्नयुर्गिरोप ब्रुवे नमसा दैव्यं जनम् ।
यथा रयिं सर्ववीरं नशामहा अपत्यसाचं श्रुत्यं दिवेदिवे ॥११॥

हे मरुद्गण ! सुख की कामना से हम आपके तेजस्वी पराक्रम की स्तुति करते हैं । आपकी नमनपूर्वक प्रशंसा करते हैं । हमें पराक्रमी संतति से युक्त यशस्वी धन सदैव प्रदान करें॥११॥

सूक्त ३१

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- विश्वेदैवा: । छंद- जगती, ७ त्रिष्टुप

अस्माकं मित्रावरुणावतं रथमादित्यै रुद्रैर्वसुभिः सचाभुवा ।
प्र यद्वयो न पप्तन्वस्मनस्परि श्रवस्यवो हृषीवन्तो वनर्षदः ॥१॥

हे मित्र तथा वरुणदेव !जब वनों में रहने वाले पक्षियों की तरह हमारा रथ अन्न की कामना से एक स्थान से दूसरे स्थान को जाता है, तब आदित्य, रुद्र तथा वसुओं के साथ संयुक्त रूप से हमारे रथ की रक्षा करें॥१॥

अध स्मा न उदवता सजोषसो रथं देवासो अभि विक्षु वाजयुम् ।
यदाशवः पद्याभिस्तित्रतो रजः पृथिव्याः सानौ जङ्घ्नन्त पाणिभिः
॥२॥

इस रथ में जुते हुए द्रुतगामी घोड़े अपने मार्ग को तय करते हुए अपने पैरों से पृथ्वी के पृष्ठ भाग को आघात करते हुए चलते हैं । हे समान प्रीति वाले देवगणो ! इस समय अन्नाभिलाषी हमारे रथ को प्रज्ञा की ओर जाने के लिए प्रेरित करें॥२॥

उत स्य न इन्द्रो विश्वचर्षणिर्दिवः शर्धेन मारुतेन सुक्रतुः ।

अनु नु स्थात्यवृकाभिरूतिभी रथं महे सनये वाजसातये ॥३॥

सर्वद्रष्टा, उत्तम कर्मा इन्द्रदेव आप मरुतों के पराक्रम से युक्त होकर द्युलोक से आकर हमारे रथ में विराजमान हों तथा हमें धन-धान्य से सम्पन्न बनाते हुए श्रेष्ठ संरक्षण प्रदान करें॥३॥

उत स्य देवो भुवनस्य सक्षणिस्त्वष्टा ग्नाभिः सजोषा जूजुवद्रथम् ।
इळा भगो बृहद्दिवोत रोदसी पूषा पुरंधिरश्विनावधा पती ॥४॥

यशस्वी और समान रूप से सभी से प्रेम करने वाले सृष्टिकर्ता त्वष्टादेव अपनी तेजस्वी शक्तियों से हमारे रथ को चलायें । इडा, अत्यन्त कान्तिवान् भंगदेव, ब्रह्माण्ड की व्यवस्था करने वाले पूषादेव, सबके पोषक दोनों अश्विनीकुमार तथा द्यावा-पृथिवी हमारे रथ को चलायें॥४॥

उत त्ये देवी सुभगे मिथूदृशोषासानक्ता जगतामपीजुवा ।
स्तुषे यद्वां पृथिवि नव्यसा वचः स्थातुश्च वयस्त्रिवया उपस्तिरे ॥५॥

परम तेजस्वी, ऐश्वर्य सुख से युक्त, एक दूसरे के प्रति सेह रखने वाली दिन और रात्रि जंगम तथा स्थावर को प्रेरणा देने वाली हैं । हे द्यावा-पृथिवी ! आप दोनों की हम नवीन स्तोत्रों से (मानसिक, कायिक तथा वाचिक) तीनों प्रकार से स्तुतियों करते हुए हविष्यान्न समर्पित करते हैं॥५॥

उत वः शंसमुशिजामिव श्मस्यहिर्बुध्न्योऽज एकपादुत ।
त्रित ऋभुक्षाः सविता चनो दधेऽपां नपादाशुहेमा धिया शमि ॥६॥

हे देवगणो ! सज्जनों की भाँति हम आपकी स्तुति करना चाहते हैं, सर्वव्यापी अहिर्बुध्य, अज एकपात, तीनों लोकों में व्याप्त सविता देव, प्राणियों के पालक अग्निदेव, हमारी स्तुतियों से हर्षित होकर भरपूरअन्न प्रदान करें॥६॥

एता वो वश्म्युद्यता यजत्रा अतक्षन्नायवो नव्यसे सम् ।
श्रवस्यवो वाजं चकानाः सप्तिर्न रथ्यो अह धीतिमश्याः ॥७॥

हे पूज्य देवगणो ! आप सभी के द्वारा स्तुत्य हैं, अत: हम आपकी स्तुति करने की कामना करते हैं । अन्न और बल की कामना से यशस्वी मनुष्यों में आपके लिए स्तुतियाँ बनायी हैं । रथ में जुड़े हुए घोड़ों की भाँति हम सदैव कार्य करते रहें॥७॥

सूक्त ३२

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- १ द्यावा पृथ्वी, २-३ इन्द्र त्वष्टा, ४-५ राका, ६-७ सिनीवाली,
८ लिंगोक्ता। छंद- जगती, ६-८ अनुष्टुप

अस्य मे द्यावापृथिवी ऋतायतो भूतमवित्री वचसः सिषासतः ।
ययोरायुः प्रतरं ते इदं पुर उपस्तुते वसूयुर्वां महो दधे ॥१॥

हे द्यावा-पृथिवि ! आपको प्रसन्न करने की कामना करने वाले स्तोताओं के आप आश्रयदाता हैं । आप दोनों की हम स्तुति करते हैं । आप हमें उत्तम बल तथा धन प्रदान करें॥१॥

मा नो गुह्या रिप आयोरहन्दभन्मा न आभ्यो रीरधो दुच्छुनाभ्यः ।
मा नो वि यौः सख्या विद्धि तस्य नः सुम्नायता मनसा तत्त्वेमहे ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! शत्रुओं की गुप्त माया दिन या रात में हमें न मारने पाये । इन दुःखदायी विपत्तियों से हमें पीड़ित न करें हम आपकी मित्रता की कामना करते हैं; अत: सुख की कामनावाले भाव को जानकर उन्हें टूटने न दें॥२॥

अहेळता मनसा श्रुष्टिमा वह दुहानां धेनुं पिप्युषीमसश्चतम् ।

पद्याभिराशुं वचसा च वाजिनं त्वां हिनोमि पुरुहूत विश्वहा ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप द्रुतमामी तथा मृदुभाषी हैं । आप हमें प्रसन्नतापूर्वक सुखकारी, दुधारू तथा परिपुष्ट गौएँ प्रदान करें । हम आपकी दिन-रात स्तुति करते हैं॥३॥

राकामहं सुहवां सुष्टुती हुवे शृणोतु नः सुभगा बोधतु त्मना ।
सीव्यत्वपः सूच्याच्छिद्यमानया ददातु वीरं शतदायमुक्थ्यम् ॥४॥

हम उत्तम स्तोत्रों के द्वारा आवाहन के योग्य 'राका' एवं 'पूर्णिमा देवियों का आवाहन करते हैं । ये ऐश्वर्यशालिनी देवियाँ हमारी प्रार्थना को स्वीकार करके कभी न टूटने वाले संकल्प रूपी कर्मों को सुदृढ़ बनायें तथा प्रशंसनीय धन तथा वीर संतति प्रदान करें॥४॥

यास्ते राके सुमतयः सुपेशसो याभिर्ददासि दाशुषे वसूनि ।
ताभिर्नो अद्य सुमना उपागहि सहस्रपोषं सुभगे ररााणा ॥५॥

हे ऐश्वर्यशालिनि राका देवि ! आप जि! उत्तम बुद्धियों से याज्ञिकों को श्रेष्ठ धन प्रदान करती हैं, आज उन्हीं श्रेष्ठ बुद्धियों से युक्त होकर अनेक प्रकार के श्रेष्ठ धन तथा पौष्टिक अन्न सहित हमारे पास पधारें॥५॥

सिनीवालि पृथुष्टुके या देवानामसि स्वसा ।
जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि दिदिड्ढि नः ॥६॥

हे विराट् स्वरूपा सिनीवाली देवि ! आप देवताओं की बहिन हैं । हे देवि ! अग्नि में समर्पित की गयी आहुतियों को ग्रहण करके हमें उत्तम सन्तति प्रदान करें॥६॥

या सुबाहुः स्वङ्गुरिः सुषूमा बहुसूवरी ।
तस्यै विश्पत्न्यै हविः सिनीवाल्यै जुहोतन ॥७॥

हे याजको ! जो सिनीवाली देवी उत्तम भुजाओं तथा सुन्दर अँगुलियों वाली, श्रेष्ठ पदार्थों तथा उत्तम प्रजाओं की जनक हैं, उन प्रजापालक सिनीवाली देवी के लिए हविष्यान्न प्रदान करें॥७॥

या गुङ्गूर्या सिनीवाली या राका या सरस्वती ।
इन्द्राणीमह्व ऊतये वरुणानीं स्वस्तये ॥८॥

जो गुंगू, जो सिनीवाली, जो राका, जो सरस्वती आदि देवियाँ हैं, उन्हें हम अपने संरक्षण की कामना से आवाहित करते हैं । इन्द्राणी तथा वरुणानी देवियों को भी अपने कल्याण की कामना से आवाहित करते हैं॥८॥

सूक्त ३३

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- रुद्रः । छंद- त्रिष्टुप

आ ते पितर्मरुतां सुम्नमेतु मा नः सूर्यस्य संदृशो युयोथाः ।
अभि नो वीरो अर्वति क्षमेत प्र जायेमहि रुद्र प्रजाभिः ॥१॥

हे मरुतों के पिता रुद्रदेव ! आपका सुख हमें प्राप्त हो । हमें सूर्य के उत्तम प्रकाश से कभी भी दूर न करें । हमारी वीर सन्तति संग्राम में शत्रुओं को पराजित करे । हम उत्तम सन्तति से प्रसिद्धि प्राप्त करें॥१॥

त्वादत्तेभी रुद्र शंतमेभिः शतं हिमा अशीय भेषजेभिः ।
व्यस्मद्द्वेषो वितरं व्यंहो व्यमीवाश्चातयस्वा विषूचीः ॥२॥

हे रुद्रदेव ! हम आपके द्वारा प्रदान की गयीं सुखदायी औषधियों के सेवन से सौ वर्ष तक जीवित रहें । आप हमारे द्वेष भावों तथा पापों को दूर करके हमारे शरीर में व्याप्त समस्त रोगों को नष्ट करें॥२॥

श्रेष्ठो जातस्य रुद्र श्रियासि तवस्तमस्तवसां वज्रबाहो ।
पर्षि णः पारमंहसः स्वस्ति विश्वा अभीती रपसो युयोधि ॥३॥

हे रुद्रदेव ! आप सबसे श्रेष्ठ ऐश्वर्यशाली हैं । हे आयुधधारी रुद्रदेव ! आप बलवानों में सबसे अधिक बलवान् हैं । हमें पापों से मुक्त करके उनके कारण आने वाली विपत्तियों को हमसे दूर करें॥३॥

मा त्वा रुद्र चुक्रुधामा नमोभिर्मा दुष्टुती वृषभ मा सहूती ।
उन्नो वीराँ अर्पय भेषजेभिर्भिषक्तमं त्वा भिषजां शृणोमि ॥४॥

हे रुद्रदेव ! वैद्यों से भी उत्तम वैद्य के रूप में आप जाने जाते है, अतः ओषधियों के द्वारा हमारी सन्तति को बलशाली बनायें । हम झूठी तथा निन्दित स्तुतियों के द्वारा आपको क्रोधित न करें । साधारण लोगों के समान बुलाकर भी हम आपको क्रोधित न करें॥४॥

हवीमभिर्हवते यो हविर्भिरव स्तोमेभी रुद्रं दिषीय ।
ऋदूदरः सुहवो मा नो अस्यै बभ्रुः सुशिप्रो रीरधन्मनायै ॥५॥

जिन रुद्रदेव को हविष्यान्न समर्पित करके स्तुतियों के द्वारा आवाहित किया जाता हैं, उन्हें हम स्तोत्रों के द्वारा शान्त भी करें । कोमल हृदय वाले तेजस्वी हँसमुख स्वभाववाले तथा उत्तम प्रकार से बुलाये जाने योग्य रुद्रदेव ईर्ष्यालुओं के द्वारा हमारी हिंसा न करायें॥५॥

उन्मा ममन्द वृषभो मरुत्वान्त्वक्षीयसा वयसा नाधमानम् ।
घृणीव च्छायामरपा अशीया विवासेयं रुद्रस्य सुम्नम् ॥६॥

कामनाओं की पूर्ति करने वाले मरुतों से युक्त हे रुद्रदेव ! हम ऐश्वर्य की कामना वालों को तेजस्वी अन्न से संतुष्ट करें । जिस प्रकार धूप से पीड़ित व्यक्ति छाया की शरण में जाता है, उसी प्रकार हम भी पाप

रहित होकर रुद्रदेव की सेवा करते हुए उनके सुख को प्राप्त करें॥६॥

क स्य ते रुद्र मृळयाकुर्हस्तो यो अस्ति भेषजो जलाषः ।
अपभर्ता रपसो दैव्यस्याभी नु मा वृषभ चक्षमीथाः ॥७॥

हे रुद्रदेव ! जिस हाथ से आप ओषधियाँ प्रदान करके सुखी बनाते हैं, वह आपका सुखदायी हाथ कहाँ हैं? हे बलशाली रुद्रदेव ! आप दैवी आपत्तियों को दूर करने वाले हैं; अत: हमारे अपराधों को क्षमा करें॥७॥

प्र बभ्रवे वृषभाय श्वितीचे महो महीं सुष्टुतिमीरयामि ।
नमस्या कल्मलीकिनं नमोभिर्गृणीमसि त्वेषं रुद्रस्य नाम ॥८॥

ऐश्वर्य प्रदाता, सबके पालक तथा श्वेत आभायुक्त रूद्रदेव की हम महान् स्तुतियाँ गाते हैं । हे स्तोताओ ! हम रुद्रदेव के उज्ज्वल नाम का संकीर्तन करते हैं, आप लोग भी तेजस्वी रुद्रदेव की स्तुतियों के द्वारा पूजा करो॥८॥

स्थिरेभिरङ्गैः पुरुरूप उग्रो बभ्रुः शुक्रेभिः पिपिशे हिरण्यैः ।
ईशानादस्य भुवनस्य भूरेर्न वा उ योषद्रुद्रादसुर्यम् ॥९॥

सबके पालक, दृढ़ अंगों वाले, अनेक रूपों के स्वामी, तेजस्वी रुद्रदेव स्वर्णाभूषणों से सुशोभित होते हैं ये समस्त भुवनों के स्वामी तथा भरण-पोषण करने वाले हैं । असुर संहारक शक्ति इनसे कभी भी अलग नहीं होती॥९॥

अर्हन्बिभर्षि सायकानि धन्वार्हन्निष्कं यजतं विश्वरूपम् ।
अर्हन्निदं दयसे विश्वमभ्वं न वा ओजीयो रुद्र त्वदस्ति ॥१०॥

हे रुद्रदेव ! आप धनुष-बाण धारण करने के योग्य हैं । स्वर्णाभूषणों से युक्त अनेकों रूपों वाले आप पूजा के योग्य हैं । हे देव ! आपसे तेजस्वी और कोई नहीं है । आप ही विशाल विश्व का संरक्षण करते हैं॥१०॥

स्तुहि श्रुतं गर्तसदं युवानं मृगं न भीममुपहत्नुमुग्रम् ।
मृळा जरित्रे रुद्र स्तवानोऽन्यं ते अस्मन्नि वपन्तु सेनाः ॥११॥

हे स्तोताओ ! यशस्वी रथ में विराजमान तरुण, सिंह के समान भय उत्पन्न करने वाले, शत्रु संहारक, बलशाली रुद्रदेव की स्तुति करो । हे रुद्रदेव ! आप स्तोताओं को सुखी बनायें तथा आपकी सेना शत्रुओं का संहार करे॥११॥

कुमारश्चित्पितरं वन्दमानं प्रति नानाम रुद्रोपयन्तम् ।
भूरेर्दातारं सत्पतिं गृणीषे स्तुतस्त्वं भेषजा रास्यस्मे ॥१२॥

हे रुद्रदेव ! जिस प्रकार पुत्र अपने पूज्य पिता को प्रणाम करता है, उसी तरह आपके समीप आने पर हम आपको प्रणाम करते हैं । हे सज्जनों के स्वामी दानदाता रुद्रदेव ! हम आपकी स्तुति करते हैं । स्तुति करने पर आप हमें ओषधियाँ प्रदान करें॥१२॥

या वो भेषजा मरुतः शुचीनि या शंतमा वृषणो या मयोभु ।
यानि मनुरवृणीता पिता नस्ता शं च योश्च रुद्रस्य वश्मि ॥१३॥

हे बलशाली मरुतो ! आपकी जो कल्याणकारी, पवित्र तथा सुखदायीं ओषधियाँ हैं, जिनका चयन हमारे पिता मनु ने किया था, उन कल्याणकारी रोग निवारक ओषधियों की हम इच्छा करते हैं॥१३॥

परि णो हेती रुद्रस्य वृज्याः परि त्वेषस्य दुर्मतिर्महीं गात् ।
अव स्थिरा मघवद्भ्यस्तनुष्व मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृळ ॥१४॥

रुद्रदेव के महान् आयुध, पीड़ादायी तीक्ष्ण शस्त्र तथा दुर्बुद्धि हमसे परे ही रहें । हे सुखदायी रुद्रदेव ! ऐश्वर्यशाली याजकों के प्रति अपने दृढ़ धनुष की प्रत्यंचा को शिथिल करें तथा हमारी सन्तति को सुखी बनायें॥१४॥

एवा बभ्रो वृषभ चेकितान यथा देव न हृणीषे न हंसि ।
हवनश्रुन्नो रुद्रेह बोधि बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥१५॥

हे तेजस्वी, सुखकारी, सर्वज्ञ तथा प्रार्थना को स्वीकार करने वाले रुद्रदेव ! आप हमें ऐसा मार्गदर्शन दें, कि हमारे कारण आप कभी क्रुद्ध न हों, आप हमें नष्ट न करें । हम उत्तम सन्तति सहित यज्ञ में आपकी उत्तम स्तुतियाँ करें॥१५॥

सूक्त ३४

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- मरुत । छंद- जगती, १५ त्रिष्टुप

धारावरा मरुतो धृष्ण्वोजसो मृगा न भीमास्तविषीभिरर्चिनः ।
अग्नयो न शुशुचाना ऋजीषिणो भृमिं धमन्तो अप गा अवृण्वत ॥१॥

मेघ की जलधारा को आवृत्त करने वाले, शत्रुओं के संहारक बल से युक्त, सिंह की भाँति भय उत्पन्न करने वाले, अग्नि जैसे तेजस्वी, सन्मार्गगामी, गति पैदा करने वाले पूज्य मरुद्गण सूर्य-रश्मियों को प्रकट करते हैं॥१॥

द्यावो न स्तृभिश्चितयन्त खादिनो व्यभ्रिया न द्युतयन्त वृष्टयः ।
रुद्रो यद्वो मरुतो रुक्मवक्षसो वृषाजनि पृश्न्याः शुक्र ऊधनि ॥२॥

हे सुवर्ण आभूषणों से अलंकृत मरुतो ! जिस प्रकार द्युलोक, नक्षत्रों से सुशोभित होता है, उसी प्रकार आप मेघ में विद्यमानं विद्युत् से शोभायमान हों । आपको रुद्रदेव ने पृथिवीं के पवित्र उदर से उत्पन्न किया है, आप ही शत्रुभक्षक तथा जल की वृष्टि करने वाले हैं॥२॥

उक्षन्ते अश्वाँ अत्याँ इवाजिषु नदस्य कर्णैस्तुरयन्त आशुभिः ।

हिरण्यशिप्रा मरुतो दविध्वतः पृक्षं याथ पृषतीभिः समन्यवः ॥३॥

मरुद्गण अपने घोड़ों को घुड़दौड़ के घोड़ों के समान बलवान् बनाते हैं । ये शब्द करने वाले द्रुतगामी घोड़े युद्ध में वेग से जाते हैं । हे सुवर्णाभूषणों से अलंकृत मरुद्गण ! आप शत्रुओं को कम्पित करने वाले हैं । आप अन्न आदि (पोषक पदार्थों) के समीप वर्षण करने वाली मेघ मालाओं के माध्यम से जाते हैं॥३॥

पृक्षे ता विश्वा भुवना ववक्षिरे मित्राय वा सदमा जीरदानवः ।
पृषदश्वासो अनवभ्रराधस ऋजिप्यासो न वयुनेषु धूर्षदः ॥४॥

ये मरुद्गण मित्र के समान सभी भुवनों को आश्रय प्रदान करते हैं । धब्बे वाले घोड़ों से युक्त, अक्षय अन्न प्रदान करने वाले ये दानशील मरुद्गण धर्मानुकूल मार्ग पर चलने वाले याजकों को उन्नति पथ पर ले जाते हैं॥४॥

इन्धन्वभिर्धेनुभी रप्शदूधभिरध्वस्मभिः पथिभिर्भ्राजदृष्टयः ।
आ हंसासो न स्वसराणि गन्तन मधोर्मदाय मरुतः समन्यवः ॥५॥

हे दीप्तिमान् आयुध वाले मन्युयुक्त मरुद्गण ! जिस तरह हंस अपने निवास स्थान की ओर जाते हैं, उसी प्रकार आप बरसने वाले मेघों के साथ धेनु युक्त होकर विघ्न रहित मार्ग से सोम रस का पान करने और आनन्दित होने के लिए यज्ञ में आये॥५॥

आ नो ब्रह्माणि मरुतः समन्यवो नरां न शंसः सवनानि गन्तन ।
अश्वामिव पिप्यत धेनुमूधनि कर्ता धियं जरित्रे वाजपेशसम् ॥६॥

हे मन्यु युक्त मरुतो ! जिस प्रकार शूरवीर आते हैं, उसी प्रकार आप हमारे शोधित सोम के पास आयें । हमारी गौओं के अधोभाग को घोड़ी की तरह पुष्ट बनायें तथा याजकों के यज्ञ को अन्न युक्त करें॥६॥

तं नो दात मरुतो वाजिनं रथ आपानं ब्रह्म चितयद्दिवेदिवे ।
इषं स्तोतृभ्यो वृजनेषु कारवे सनिं मेधामरिष्टं दुष्टरं सहः ॥७॥

हे वीर मरुद्गण ! आप हमें अन्न युक्त सन्तति प्रदान करें । वह सन्तति आपके आगमन के समय आपका यशोगान करें । आप स्तोताओं को अन्न प्रदान करें । युद्ध के समय पराक्रमी स्तोताओं को दानवृत्ति, युद्ध – कौशल, सद्बुद्धि और अभय तथा अजेय सहनशीलता प्रदान करें॥७॥

यद्युञ्जते मरुतो रुक्मवक्षसोऽश्वान्रथेषु भग आ सुदानवः ।
धेनुर्न शिश्वे स्वसरेषु पिन्वते जनाय रातहविषे महीमिषम् ॥८॥

ऐश्वर्यशाली, दानशील मरुद्गणों के वक्षस्थल में सुवर्णाभूषण सुशोभित हैं । जिस प्रकार गाय बछड़े को दूध देती है, उसी प्रकार मरुद्गण घोड़ों को रथ में जोतते हुए, हवि प्रदान करने वाले याजक के घर में भरपूर मात्रा में अन्न प्रदान करते हैं॥८॥

यो नो मरुतो वृकताति मर्त्यो रिपुर्दधे वसवो रक्षता रिषः ।
वर्तयत तपुषा चक्रियाभि तमव रुद्रा अशसो हन्तना वधः ॥९॥

हे आश्रय प्रदाता मरुद्गण ! जो मनुष्य भेड़िये की तरह हमसे शत्रुता करता है, उस हिंसक मनुष्य से हमारी रक्षा करें । उसे संताप जनक

चक्र द्वारा चारों ओर से हरायें । हे रुद्रदेव ! आप शत्रुओं के आयुधों को दूर करके उन्हें नष्ट करें॥९॥

चित्रं तद्वो मरुतो याम चेकिते पृश्न्या यदूधरप्यापयो दुहुः ।
यद्वा निदे नवमानस्य रुद्रियास्त्रितं जराय जुरतामदाभ्याः ॥१०॥

हे मरुद्गणो ! आप गाय के दुग्धाशय का दोहन करके दूध पीते और सबके प्रति मित्रभाव रखते हैं । आपने स्तोताओं के निन्दकों की हत्या की थी तथा वित नामक ऋषि के शत्रुओं का संहार किया था । आपका यह आश्चर्यजनक पराक्रम सर्वविदित है॥१०॥

तान्वो महो मरुत एवयान्वो विष्णोरेषस्य प्रभृथे हवामहे ।
हिरण्यवर्णान्ककुहान्यतस्रुचो ब्रह्मण्यन्तः शंस्यं राध ईमहे ॥११॥

हे द्रुतगामी मरुद्गणो !आपको हम अपने व्यापक हितों की पूर्ति की कामना से आवाहित करते हैं । हे सुवर्ण के समान तेजस्वी मरुद्गणो !पुण्य कार्य में निरत हम याजकगण आपसे प्रशंसनीय धन की याचना करते हैं॥११॥

ते दशग्वाः प्रथमा यज्ञमूहिरे ते नो हिन्वन्तूषसो व्युष्टिषु ।
उषा न रामीररुणैरपोर्णुते महो ज्योतिषा शुचता गोअर्णसा ॥१२॥

दसों इन्द्रियों को अपने वश में करने वाले अद्वितीय वीरों (मरुतों) ने पहले यज्ञ किया । उषाकाल आरंभ होते ही वे हमें प्रेरित करें । जिस प्रकार उषा की अरुणाभ किरणें अंधेरी रात्रि को हटाती हैं, उसी तरह मरुद्गण अपनी तेजस्वी किरणों से सम्पूर्ण विश्व को प्रकाशित करते हैं॥१२॥

ते क्षोणीभिररुणेभिर्नाञ्जिभी रुद्रा ऋतस्य सदनेषु वावृधुः ।
निमेघमाना अत्येन पाजसा सुश्चन्द्रं वर्णं दधिरे सुपेशसम् ॥१३॥

रुद्रपुत्र ये मरुद्गण अरुणाभ वस्त्रालंकारों से अलंकृत होकर जल के निवास स्थल मेघ में विस्तार पाते हैं । ये मरुद्गण परस्पर मिलकर वेगयुक्त बल से जल लाते समय हर्षदायक तथा मनोहर सौन्दर्य धारण करते हैं॥१३॥

ताँ इयानो महि वरूथमूतय उप घेदेना नमसा गृणीमसि ।
त्रितो न यान्पञ्च होतृनभिष्टय आववर्तदवराञ्चक्रियावसे ॥१४॥

हम याजकगण उन मरुद्गणों से प्रशंसनीय धन की याचना करते हुए अपने संरक्षण के लिए स्तोत्रों के द्वारा उनकी स्तुतियाँ करते हैं । इन अत्यन्त श्रेष्ठ मरुद्गणों ने पाँच (पाँचों वर्ण) याजकों को चक्र रूपी हथियार से संरक्षण प्रदान करने के लिए त्रित नामक ऋषि को बुलाया था॥१४॥

यया रध्रं पारयथात्यंहो यया निदो मुञ्चथ वन्दितारम् ।
अर्वाची सा मरुतो या व ऊतिरो षु वाश्रेव सुमतिर्जिगातु ॥१५॥

हे मरुद्गणो ! आप जिस समर्थ संरक्षण से याजक को पाप से बचाते हैं, जिस संरक्षण से स्तोताओं को निन्दा करने वालों से मुक्त करते हैं, वहीं समर्थ संरक्षण हमें भी प्रदान करें॥१५॥

सूक्त ३५

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता-अपांनपात् । छंद- त्रिष्टुप

उपेमसृक्षि वाजयुर्वचस्यां चनो दधीत नाद्यो गिरो मे ।
अपां नपादाशुहेमा कुवित्स सुपेशसस्करति जोषिषद्धि ॥१॥

अन्न और बल की कामना से हम इन स्तुतियों का उच्चारण करते हैं । द्रुतगामी अपांनपात् (अग्नि) देव हमारी स्तुतियों को स्वीकार करते हुए अन्नादि को पुष्ट बनायें और हमें उत्तम रूप प्रदान करें॥१॥

इमं स्वस्मै हृद आ सुतष्टं मन्त्रं वोचेम कुविदस्य वेदत् ।
अपां नपादसुर्यस्य मह्ना विश्वान्यर्यो भुवना जजान ॥२॥

इन अपांनपात् देव के लिए हम हृदय से रचित मंत्रों का गान करें, जिन्हें वे स्वीकार करें । इन अपांनपात् देव ने अपनी असुर संहारक शक्ति की महिमा से समस्त लोकों को उत्पन्न किया है ॥२॥

समन्या यन्त्युप यन्त्यन्याः समानमूर्वं नद्यः पृणन्ति ।
तमू शुचिं शुचयो दीदिवांसमपां नपातं परि तस्थुरापः ॥३॥

कुछ जल प्रवाह पास आते हैं, अन्य प्रवाह दूर जाते हैं । नदियाँ संयुक्त होकर सागर में पहुँचती हैं । वहाँ वह जल अपांनपात् देव को चारों ओर से घेर लेता है॥३॥

तमस्मेरा युवतयो युवानं मर्मृज्यमानाः परि यन्त्यापः ।
स शुक्रेभिः शिक्वभी रेवदस्मे दीदायानिध्मो घृतनिर्णिगप्सु ॥४॥

जिस प्रकार अहंकार रहित स्त्री अपने युवा पति को अलंकृत करती हैं, उसी प्रकार दीप्तियुक्त स्वरूप वाले ये अपांनपात् देव जलमय प्रकृति में बिना ईंधन के ही (बड़वाग्नि रूप में) चमकते हैं । ये अपांनपात् देव हमें अपने तेजस्वी स्वरूप में धन प्रदान करें॥४॥

अस्मै तिस्रो अव्यथ्याय नारीर्देवाय देवीर्दिधिषन्त्यन्नम् ।
कृता इवोप हि प्रसर्स्रे अप्सु स पीयूषं धयति पूर्वसूनाम् ॥५॥

तीन देवियाँ (इळा, सरस्वती तथा भारती) दुःख रहित अपांनपात् देव के लिए अन्न धारण करती हैं । जिसे प्रकार जल के प्रवाह में कोई पदार्थ सुगमता से आगे बढ़ता है, उसी प्रकार ये तीनों देवियाँ आगे बढ़ती है । अपनपात् देव जल में उत्पन्न अमृत का सर्व प्रथम पान करते हैं॥५॥

अश्वस्यात्र जनिमास्य च स्वर्द्रुहो रिषः सम्पृचः पाहि सूरीन् ।
आमासु पूर्षु परो अप्रमृष्यं नारातयो वि नशन्नानृतानि ॥६॥

इन अपांनपात्देव के द्वारा ही अश्व (उच्चैःश्रवा नामक) का जन्म होता है । यह अश्व उत्तम सुखदायी । है । अपांनपात् देव ! आप हिंसकों तथा द्रोहियों से स्तोताओं की रक्षा करें । अपरिपक्व बुद्धि वाले,

असत्याचरण वाले तथा अदानी व्यक्ति इन अहिंसनीय अपांनपात् देव को नहीं प्राप्त कर सकते॥६॥

स्व आ दमे सुदुघा यस्य धेनुः स्वधां पीपाय सुभ्वन्नमत्ति ।
सो अपां नपादूर्जयन्नप्स्वन्तर्वसुदेयाय विधते वि भाति ॥७॥

अपने आवास में रहने वाले अपांनषात् देव की गौएँ सहज ही दुही जा सकती हैं । ये अपांनपात् देव अन्न की वृद्धि करते हुए उत्तम अन्न को स्वीकार करते हैं । ये देव जल के मध्य प्रबल होकर याजकों को धन देने की कामना से दीप्तिवान् होते हैं॥७॥

यो अप्स्वा शुचिना दैव्येन ऋतावाजस्र उर्विया विभाति ।
वया इदन्या भुवनान्यस्य प्र जायन्ते वीरुधश्च प्रजाभिः ॥८॥

ज़ल में रहने वाले, सत्ययुक्त, अनश्वर, अत्यन्त विशाल, अपांनपात् देव चारों ओर से प्रकाशित होते हैं । अन्य दूसरे भुवन इनकी शाखाओं के रूप में हैं । इन्हीं अपांनपातु देव से फल-फूल तथा अन्यान्य वनौषधियाँ समस्त प्रजा को प्राप्त होती हैं॥८॥

अपां नपादा ह्यस्थादुपस्थं जिह्मानामूर्ध्वो विद्युतं वसानः ।
तस्य ज्येष्ठं महिमानं वहन्तीर्हिरण्यवर्णाः परि यन्ति यह्वीः ॥९॥

ये अपांनषात् देव कुटिल गति से चलने वाले मेघों के ऊपर विद्युत् से आच्छादित होकर अन्तरिक्ष में रहते हैं । जब ये देव जल वृष्टि करते हैं, तब बड़ी-बड़ी नदियाँ चारों ओर से प्रवाहित होती हुई इन देव की महिमा का गान करती हैं॥९॥

हिरण्यरूपः स हिरण्यसंदृगपां नपात्सेदु हिरण्यवर्णः ।
हिरण्ययात्परि योनेर्निषद्या हिरण्यदा ददत्यन्नमस्मै ॥१०॥

ये अपांनपात् देव सुवर्ण के समान स्वरूप वाले,सुवर्ण के समान आँखों वाले,सुवर्ण के समान वर्णवाले हैं । ये देव सुवर्णमय स्थल में विराजमान होकर सुशोभित होते हैं । सुवर्ण प्रदान करने वाले याजक उन्हें अन्न देते हैं॥१०॥

तदस्यानीकमुत चारु नामापीच्यं वर्धते नप्तुरपाम् ।
यमिन्धते युवतयः समित्था हिरण्यवर्णं घृतमन्नमस्य ॥११॥

सुन्दर नाम वाले अपांनपात् देव की किरणें मेघों में रहकर विस्तार पाती हैं । सुवर्ण के समान तेजस्वी स्वरूप वाले अपांनपात् देव को अँगुलियाँ जल समर्पित करके विस्तृत करती हैं॥११॥

अस्मै बहूनामवमाय सख्ये यज्ञैर्विधेम नमसा हविर्भिः ।
सं सानु मार्ज्मि दिधिषामि बिल्मैर्दधाम्यन्नैः परि वन्द ऋग्भिः ॥१२॥

बहुतों में श्रेष्ठ, समान रूप से सबके मित्र इन अपांनपात् देव की (हम) आहुतियों एवं स्तुतियों द्वारा सेवा करते हैं । हम गिरि शिखरों की भाँति उनके स्वरूप को अलंकृत करते हैं । समिधाओं को प्रदीप्त करके अन्न की आहुतियाँ समर्पित करते हुए ऋचाओं के द्वारा हम अपांनपात् देव की वन्दना करते हैं॥१२॥

स ईं वृषाजनयत्तासु गर्भं स ईं शिशुर्धयति तं रिहन्ति ।
सो अपां नपादनभिम्लातवर्णोऽन्यस्येवेह तन्वा विवेष ॥१३॥

वृष्टि करने में समर्थ अपांनपात्देव जल से पूर्ण वायुमण्डल को उत्पन्न करते हैं । ये अपांनपात् देव छोटे शिशु की भाँति समुद्र से जल ग्रहण करके समस्त दिशाओं में जल को पहुँचाते हैं । ये अपांनपात् देव तेजस्वी होकर इस लोक में अन्य रूप में रहते हैं॥१३ ॥

अस्मिन्पदे परमे तस्थिवांसमध्वस्मभिर्विश्वहा दीदिवांसम् ।
आपो नप्त्रे घृतमन्नं वहन्तीः स्वयमत्कैः परि दीयन्ति यह्वीः ॥१४॥

ये अपांनपात् देव सर्वोत्कृष्ट स्थान में विराजमान रहते हैं । सतत प्रवाहशील महान् जल समूह उन अविनाशी तेजस्वी देव के निमित्त पोषक रस पहुँचाते हुए उन्हें घेरे रहते हैं॥१४॥

अयांसमग्ने सुक्षितिं जनायायांसमु मघवद्भ्यः सुवृक्तिम् ।
विश्वं तद्भद्रं यदवन्ति देवा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥१५॥

हे अग्निदेव ! आप उत्तम प्रकार से आश्रय प्रदान करते हैं, अत: सन्तति लाभ के निमित्त हम आपके पास आये हैं । देवगणों का कल्याणकारी संरक्षण हमें मिले तथा आपकी अनुकम्पा से ऐश्वर्यशाली भी हमसे श्रेष्ठ व्यवहार करें । हम श्रेष्ठ सन्तति सहित यज्ञ में देवगणों का यशोगान करें॥१५॥

सूक्त ३६

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पञ्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- ऋतुदेवता । छंद- जगती

तुभ्यं हिन्वानो वसिष्ट गा अपोऽधुक्षन्त्सीमविभिरद्रिभिर्नरः ।
पिबेन्द्र स्वाहा प्रहुतं वषट्कृतं होत्रादा सोमं प्रथमो य ईशिषे ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! इस सोम रस में गौ दुग्ध तथा जल मिश्रित है । याज्ञिकों द्वारा पत्थर से कूटकर निकाले गये इस सोम रस को ऊन की छननी से शोधित किया जाता है । हे इन्द्रदेव ! आप समस्त संसार के शासक हैं, अत: याजकों द्वारा वषट्कार पूर्वक स्वाहा के साथ समर्पित किये गये सोम को यज्ञ में आकर सबसे पहले आप पान करें॥१॥

यज्ञैः सम्मिश्लाः पृषतीभिर्ऋष्टिभिर्यामञ्छुभ्रासो अञ्जिषु प्रिया उत ।
आसद्या बर्हिर्भरतस्य सूनवः पोत्रादा सोमं पिबता दिवो नरः ॥२॥

यज्ञीय कार्य में सहायक, भूमि को सिंचित करने वाले,शस्त्रों से सुशोभित,आभूषण प्रेमी,भरण-पोषण में समर्थ, देवपुत्र तथा नेतृत्व प्रदान करने वाले हे मरुद्गणो !आप यज्ञ में विराजमान होकर पवित्र सोमरस का पान करें॥२॥

अमेव नः सुहवा आ हि गन्तन नि बर्हिषि सदतना रणिष्टन ।
अथा मन्दस्व जुजुषाणो अन्धसस्त्वष्टर्देवेभिर्जनिभिः सुमद्गणः ॥३॥

हे यशस्वी मरुतो ! आप हमारे पास आयें और कुश-आसन में विराजमान होकर सुशोभित हों । हे त्वष्टा देव ! आप देवगणों तथा दैवी शक्तियों के सोमरस का पान करके हर्षित हों॥३॥

आ वक्षि देवाँ इह विप्र यक्षि चोशन्होतर्नि षदा योनिषु त्रिषु ।
प्रति वीहि प्रस्थितं सोम्यं मधु पिबाग्नीध्रात्तव भागस्य तृप्णुहि ॥४॥

हे मेधावी अग्निदेव ! हमारे इस यज्ञ में देवगणों को सत्कार पूर्वक बुलायें । हे होता अग्निदेव ! हमारे यज्ञ की कामना से आप तीनों लोकों में प्रतिष्ठित हों । शोधित सोमरस को स्वीकार करके इस यज्ञ में मोमपान करें, समर्पित किये गये भाग से आप तृप्त हों॥४॥

एष स्य ते तन्वो नृम्णवर्धनः सह ओजः प्रदिवि बाह्वोर्हितः ।
तुभ्यं सुतो मघवन्तुभ्यमाभृतस्त्वमस्य ब्राह्मणादा तृपत्पिब ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! यह सोमरस आपके शरीर में शक्ति की वृद्धि करने वाला है । इसी सोम से आपकी भुजायें बलशाली हैं तथा आप तेजस्वी एवं ओजस्वी हैं । है. इन्द्रदेव ! आप के निमित्त ही यह सोमरस लाया गया है तथा शोधित किया गया है । ज्ञानी जनों द्वारा प्रदान किये गये सोमरस का पान करके आप तृप्त हों॥५॥

जुषेथां यज्ञं बोधतं हवस्य मे सत्तो होता निविदः पूर्व्या अनु ।
अच्छा राजाना नम एत्यावृतं प्रशास्त्रादा पिबतं सोम्यं मधु ॥६॥

हे मित्रावरुण ! आप हमारे यज्ञ में आयें । होतागण उत्तम स्तोत्रों से स्तुति करते हैं, अत: हमारे आवाहन को सुनकर यज्ञ में बैठकर सुशोभित हों । हे देवो ! याजकों द्वारा शोधित यह सोमरस दुग्ध मिश्रित है, अतः हमारे इस यज्ञ में आकर इस सोमरस का पान करें॥६॥

सूक्त ३७

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- ऋतुदेवता । छंद- जगती

मन्दस्व होत्रादनु जोषमन्धसोऽध्वर्यवः स पूर्णां वष्ट्यासिचम् ।
तस्मा एतं भरत तद्वशो ददिर्होत्रात्सोमं द्रविणोदः पिब ऋतुभिः ॥१॥

हे धन प्रदाता अग्निदेव ! होताओं के द्वारा समर्पित किये गये सोमरस का प्रसन्नतापूर्वक पान करके हर्षित हों। है अध्वर्युगण ! अग्निदेव पूर्णाहुति की कामना करते हैं, अत: उनके लिए सोमरस प्रदान करें । सोम की कामना वाले ये अग्निदेव तुम्हें धन प्रदान करेंगे । हे अग्निदेव ! यज्ञ में होताओं के द्वारा समर्पित किये गये इस सोमरस का ऋतु के अनुरूप पान करें॥१॥

यमु पूर्वमहुवे तमिदं हुवे सेदु हव्यो ददिर्यो नाम पत्यते ।
अध्वर्युभिः प्रस्थितं सोम्यं मधु पोत्रात्सोमं द्रविणोदः पिब ऋतुभिः ॥२॥

जिन अग्निदेव को हमने पहले भी बुलाया था, उन्हें अब भी आवाहित करते हैं । ये अग्निदेव निश्चित ही याजकों को धन प्रदान करने वाले तथा सभी के स्वामी हैं, आवाहन के योग्य हैं । इन देव के लिए याजकों

द्वारा सोमरस शोधित किया गया है । हे अग्निदेव ! इस पवित्र यज्ञ में ऋतु के अनुरूप सोमरस का पान करें॥२॥

मेद्यन्तु ते वह्नयो येभिरीयसेऽरिषण्यन्वीळयस्वा वनस्पते ।
आयूया धृष्णो अभिगूर्या त्वं नेष्ट्रात्सोमं द्रविणोदः पिब ऋतुभिः ॥३॥

हे द्रविणोदादेव ! आप जिस अश्व पर आरूढ़ होते हैं, वह तृप्त हो । हे वनस्पतिदेव ! आप हमें हिसित न करके शक्तिशाली बनायें । हे शत्रुनाशक देव ! आप यज्ञ में पधार कर याज्ञिकों द्वारा समर्पित किये गये सोमरस का पान ऋतु के अनुरूप करें॥३॥

अपाद्धोत्रादुत पोत्रादमत्तोत नेष्ट्रादजुषत प्रयो हितम् ।
तुरीयं पात्रममृक्तममर्त्यं द्रविणोदाः पिबतु द्राविणोदसः ॥४॥

जो द्रविणोदादेव नेष्टा के यज्ञ में पवित्र सोमरस का पान करके आनन्दित हुए, वे धन प्रदाता देव भली-भाँति शोधित किये गये, अमरत्व प्रदान करने वाले सोमरस का पान करें॥४॥

अर्वाञ्चमद्य यय्यं नृवाहणं रथं युञ्जाथामिह वां विमोचनम् ।
पृङ्क्तं हवींषि मधुना हि कं गतमथा सोमं पिबतं वाजिनीवसू ॥५॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप अपने अभीष्ट स्थान पर ले जाने वाले द्रुतगामी रथ को हमारे यज्ञ स्थल में आने के लिए नियोजित करें । हमारे यज्ञ में आकर हमारे हविष्यान्न को सुस्वादु बनायें । हे आश्रयं प्रदाता अश्विनीकुमारो ! आप दोनों सोम रस का पान करें॥५॥

जोष्यग्ने समिधं जोष्याहुतिं जोषि ब्रह्म जन्यं जोषि सुष्टुतिम् ।

विश्वेभिर्विश्वाँ ऋतुना वसो मह उशन्देवाँ उशतः पायया हविः ॥६॥

हे अग्निदेव ! आप हमारी समिधाओं से प्रदीप्त होकर आहुतियों को ग्रहण कर याजकों द्वारा की गयी सुन्दर स्तुतियों को स्वीकार करें । सोमपान की अभिलाषा वाले हे अग्निदेव ! आप सभी के आश्रय दाता हैं । आप सभी देवों, ऋभुओं और विश्वेदेवों के साथ सोमरस का पान करें॥६॥

सूक्त ३८

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- सविता । छंद- त्रिष्टुप

उदु ष्य देवः सविता सवाय शश्वत्तमं तदपा वह्निरस्थात् ।
नूनं देवेभ्यो वि हि धाति रत्नमथाभजद्वीतिहोत्रं स्वस्तौ ॥१॥

सम्पूर्ण जगत् को धारण करने वाले, प्रकाशक तथा तेजस्वी सवितादेव सभी (प्राणियों) को कर्म की प्रेरणा देते हुए प्रतिदिन उदित होते हैं । देवत्व धारियों (स्तोताओं) के लिए ये सवितादेव रत्न धारण करते हैं । अत: वे स्तोता अपने मंगल की कामना से यज्ञ करें॥१॥

विश्वस्य हि श्रुष्टये देव ऊर्ध्वः प्र बाहवा पृथुपाणिः सिसर्ति ।
आपश्चिदस्य व्रत आ निमृग्रा अयं चिद्वातो रमते परिज्मन् ॥२॥

ये तेजस्वी सवितादेव उदित होकर सम्पूर्ण विश्व के सुख के लिए अपनी विशाल (किरणों रूपी) भुजाओं को फैलाते हैं । सवितादेव के अनुशासन में ही अत्यन्त पवित्र जल प्रवाहित होता है तथा उन्हीं के नियमों में आबद्ध वायु भी प्रवाहित होते हुए आनन्दित होती है॥२॥

आशुभिश्चिद्यान्वि मुचाति नूनमरीरमदतमानं चिदेतोः ।

अह्यर्षूणां चिन्नयाँ अविष्यामनु व्रतं सवितुर्मोक्यागात् ॥३॥

अस्त होते हुए सवितादेव अपनी द्रुतगामी रश्मियों को समेट कर चलते हुए यात्रियों को रोक देते हैं । शत्रुओं पर आक्रमण करने वाले वीरों को रोक देते हैं उनके इस कर्म की समाप्ति के बाद ही रात्रि का आगमन होता है॥३॥

पुनः समव्यद्विततं वयन्ती मध्या कर्तोर्न्यधाच्छक्म धीरः ।
उत्संहायास्थाद्व्यृतूँरदर्धररमतिः सविता देव आगात् ॥४॥

अन्धकार रूपी रात्रि वस्त्र बुनने की तरह सम्पूर्ण प्रकाश को आबद्ध कर लेती है । ज्ञानीजन (ऐसी स्थिति में) करने योग्य कार्यों को बीच में ही रोक देते हैं तथा कभी न रुकने वाले ऋतु विभाग कर्ता सवितादेव के उदित होते ही सम्पूर्ण जगत् निद्रा को त्याग देता है॥४॥

नानौकांसि दुर्यो विश्वमायुर्वि तिष्ठते प्रभवः शोको अग्नेः ।
ज्येष्ठं माता सूनवे भागमाधादन्वस्य केतमिषितं सवित्रा ॥५॥

जिस प्रकार अग्नि का तेज़ घरों तथा समस्त जीवन में व्याप्त है, उसी प्रकारे सवितादेव का तेज सम्पूर्ण लोकों में व्याप्त है । उषा माता सवितादेव द्वारा प्रदत्त यज्ञ के श्रेष्ठ भाग को अपने पुत्र अग्नि के लिए धारण करती हैं॥५॥

समाववर्ति विष्ठितो जिगीषुर्विश्वेषां कामश्चरताममाभूत् ।
शश्वाँ अपो विकृतं हित्व्यागादनु व्रतं सवितुर्दैव्यस्य ॥६॥

सवितादेव के अस्त हो जाने पर विजयाकांक्षी वीर योद्धा आक्रमण को बीच में ही रोक देता है । गतिमान् प्राणी घर जाने की इच्छा करते हैं तथा सतत कार्य करने वाले भी अधूरे काम को रोककर घर लौट आते हैं॥६॥

त्वया हितमप्यमप्सु भागं धन्वान्वा मृगयसो वि तस्थुः ।
वनानि विभ्यो नकिरस्य तानि व्रता देवस्य सवितुर्मिनन्ति ॥७॥

हे सवितादेव ! अन्तरिक्ष में आपने जो जल भाग स्थापित किया है, उसे प्राणी मरुप्रदेशों में भी प्राप्त करते हैं । आपने ही पक्षियों के (आश्रय) के लिए जंगल प्रदान किये हैं । ऐसे तेजस्वी सविता देव के कर्म को कोई नष्ट नहीं कर सकता॥७॥

याद्राध्यं वरुणो योनिमप्यमनिशितं निमिषि जर्भुराणः ।
विश्वो मार्ताण्डो व्रजमा पशुर्गात्स्थशो जन्मानि सविता व्याकः ॥८॥

सविता देव के अस्त हो जाने पर सतत गमनशील वरुण देव सभी को सुखकारी तथा वांछनीय आश्रयं प्रदान करते हैं । इस प्रकार सवितादेव के अस्त होते ही पक्षी तथा जानवर अपने-अपने स्थान पर पहुँचकर अलग-अलग हो जाते हैं॥८॥

न यस्येन्द्रो वरुणो न मित्रो व्रतमर्यमा न मिनन्ति रुद्रः ।
नारातयस्तमिदं स्वस्ति हुवे देवं सवितारं नमोभिः ॥९॥

जिन सवितादेव के अनुशासन को इन्द्र, वरुण, मित्र, अर्यमा तथा रुद्रदेव भी नहीं तोड़ सकते हैं और न ही शत्रु तोड़ सकते हैं– ऐसे

तेजस्वी सवितादेव को हम अपने मंगल की कामना से नमस्कार पूर्वक आवाहित करते हैं॥९॥

भगं धियं वाजयन्तः पुरंधिं नराशंसो ग्नास्पतिर्नो अव्याः ।
आये वामस्य संगथे रयीणां प्रिया देवस्य सवितुः स्याम ॥१०॥

समस्त जगत् को धारण करने वाले, सुखदाता, स्तुत्य, भजनीय, ज्ञानदाता तथा प्रज्ञा पालक सविता देव हमारी रक्षा करें । उत्तम ऐश्वर्य तथा पशु आदि सम्पदाओं के प्राप्त होने पर भी हम सवितादेव के प्रिय होकर रहें॥१०॥

अस्मभ्यं तद्दिवो अद्भ्यः पृथिव्यास्त्वया दत्तं काम्यं राध आ गात् ।
शं यस्तोतृभ्य आपये भवात्युरुशंसाय सवितर्जरित्रे ॥११॥

हे सवितादेव ! आपके द्वारा प्रदत्त ऐश्वर्य स्तोताओं तथा उनके वंशजों के लिए कल्याणकारी हैं, अत: द्युलोक, भूलोक तथा अन्तरिक्षलोक का कान्तियुक्त ऐश्वर्य में प्रदान करें । हम आपकी स्तुति करते हैं॥११॥

सूक्त ३९

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- आश्विनौ । छंद- त्रिष्टुप

ग्रावाणेव तदिदर्थं जरेथे गृध्रेव वृक्षं निधिमन्तमच्छ ।
ब्रह्माणेव विदथ उक्थशासा दूतेव हव्या जन्या पुरुत्रा ॥१॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार पक्षी फल से लदे वृक्ष की ओर जाते हैं, वैसे ही आप यजमानों के पास पहुँचे । दो शिलाखण्डों से उत्पन्न ध्वनि की तरह (शब्दनाद करते हुए शत्रुओं को बाधा पहुँचायें । यज्ञ में ब्रह्मा नामक ऋत्विक् तथा जनता के हितकारी दूतों की तरह आप बहुतों के द्वारा सम्मान पूर्वक बुलाने योग्य हैं॥१॥

प्रातर्यावाणा रथ्येव वीराजेव यमा वरमा सचेथे ।
मेने इव तन्वा शुम्भमाने दम्पतीव क्रतुविदा जनेषु ॥२॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप प्रभात वेला में यात्रा करने वाले दो रथियों की तरह महारथी वीर हैं, दो जुड़वा भाई जैसे हैं । दो स्त्रियों की तरह सुन्दर शरीर वाले हैं । पति-पत्नी के समान परस्पर सम्बद्ध रहकर कार्य करने वाले हैं । आप अपने श्रेष्ठ भक्तों के पास जाते हैं॥२॥

शृङ्गेव नः प्रथमा गन्तमर्वाक्छफाविव जर्भुराणा तरोभिः ।
चक्रवाकेव प्रति वस्तोरुस्रार्वाञ्चा यातं रथ्येव शक्रा ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! सींगों के समान अग्रणी एवं खुरों के समान गतिमान् होकर आप हमारे पास आयें अपने कर्म में समर्थ, शत्रुहन्ता हे अश्विनीकुमारो ! जिस तरह चक्रवाक् दम्पती अथवा दो महारथी आते हैं, उसी तरह आप दोनों हमारे पास आयें॥३॥

नावेव नः पारयतं युगेव नभ्येव न उपधीव प्रधीव ।
श्वानेव नो अरिषण्या तनूनां खृगलेव विस्रसः पातमस्मान् ॥४॥

हे अश्विनीकुमारो ! नौका की तरह, रथ में जुड़े अश्वों के समान, रथचक्र के केन्द्र में लगे दण्डों के समान, रथ में लगे बगल के दो दण्डों के समान, रथ में लगे पहियों के दो हालों (लोहे के चक्रों) के समान हमें संकटों से पार करें । दायें-बायें चलने वाले दो कुत्तों तथा कवचों के समान रक्षक होकर हमारे शरीरों की रक्षा करते हुए हमें नाश से बचायें॥४॥

वातेवाजुर्या नद्येव रीतिरक्षी इव चक्षुषा यातमर्वाक् ।
हस्ताविव तन्वे शम्भविष्ठा पादेव नो नयतं वस्यो अच्छ ॥५॥

हे अश्विनीकुमारो ! जीर्ण न होने वाले वायु प्रवाह के समान सदैव गतिमान्, नदियों की भाँति तथा दो आँखों के समान दर्शन शक्ति से युक्त होकर आप दोनों हमारे पास आयें । आप दोनों शरीर के लिए सुखदायी हाथों, पैरों के समान हैं । आप हमें पाँवों के समान श्रेष्ठ मार्ग में ले चलें॥५॥

ओष्ठाविव मध्वास्ने वदन्ता स्तनाविव पिप्यतं जीवसे नः ।
नासेव नस्तन्वो रक्षितारा कर्णाविव सुश्रुता भूतमस्मे ॥६॥

हे अश्विनीकुमारो ! मुख के ओंठों के समान मधुर वचन कहते हुए आप दोनों जिस तरह स्तनों (के पान) से बच्चे पुष्ट होते हैं, उसी प्रकार हमारे जीवन वृद्धि के लिए हमें पुष्ट बनायें । आप दोनों नाकों के समान शरीर के संरक्षक तथा दोनों कानों के समान उत्तम रीति से श्रवण करने वाले बनें॥६॥

हस्तेव शक्तिमभि संददी नः क्षामेव नः समजतं रजांसि ।
इमा गिरो अश्विना युष्मयन्तीः क्षणोत्रेणेव स्वधितिं सं शिशीतम् ॥७॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हाथों की तरह हमें शक्ति-सामर्थ्य प्रदान करें । द्युलोक तथा पृथिवी लोक की तरह भली-भाँति आश्रय प्रदान करें । हे अश्विनीकुमारो ! जिस तरह से तलवार को शान चढ़ाकर तीक्ष्ण बनाते हैं, उसी प्रकार हमारी स्तुतियों को भली-भाँति प्रभावशाली बनायें॥७॥

एतानि वामश्विना वर्धनानि ब्रह्म स्तोमं गृत्समदासो अक्रन् ।
तानि नरा जुजुषाणोप यातं बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥८॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपकी कीर्ति के विस्तार के लिए गृत्समद ऋषि ने ज्ञानदायी स्तोत्र बनाये हैं । आप नेतृत्व प्रदान करने वाले हैं; अत: उन (स्तोत्रों) को स्वीकार करते हुए आप दोनों हमारे पास आयें । हम यज्ञ में सुसन्तति युक्त होकर आपका यशोगान करें॥८॥

सूक्त ४०

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- सोमापूषणौ, ६ अदिति: सविता । छंद- त्रिष्टुप

सोमापूषणा जनना रयीणां जनना दिवो जनना पृथिव्याः ।
जातौ विश्वस्य भुवनस्य गोपौ देवा अकृण्वन्नमृतस्य नाभिम् ॥१॥

हे सोमदेव तथा पूषादेव ! आप दोनों द्युलोक तथा पृथ्वीलोक के ऐश्वर्य उत्पादक हैं । जन्म लेते ही आप दोनों समस्त संसार के संरक्षक हुए हैं । देवों ने आपको अमृत का केन्द्र बनाया है॥१॥

इमौ देवौ जायमानौ जुषन्तेमौ तमांसि गूहतामजुष्टा ।
आभ्यामिन्द्रः पक्वमामास्वन्तः सोमापूषभ्यां जनदुस्रियासु ॥२॥

सोमदेव तथा पूषादेव के जन्म लेते ही सभी देवगण इन दोनों की सेवा करने लगे । ये दोनों देव अप्रिय अन्धकार को नष्ट करते हैं । इन्द्रदेव ने इन सोम तथा पूषादेवों की मदद से तरुणी धेनुओं में पक्व दुग्ध उत्पन्न किया॥२॥

सोमापूषणा रजसो विमानं सप्तचक्रं रथमविश्वमिन्वम् ।
विषूवृतं मनसा युज्यमानं तं जिन्वथो वृषणा पञ्चरश्मिम् ॥३॥

है सोम तथा पूषादेवो ! आप समस्त लोकों के उत्पन्न करने वाले, सर्वव्यापी, समस्त संसार के रक्षक, सात ऋतु रूप (मलमास सहित) चक्रों से युक्त, इच्छा से संचालित होने वाले, पाँच लगामों वाले रथ को हमारी ओर प्रेरित करें॥३॥

दिव्यन्यः सदनं चक्र उच्चा पृथिव्यामन्यो अध्यन्तरिक्षे ।
तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुं रायस्पोषं वि ष्यतां नाभिमस्मे ॥४॥

आप में से एक ऊँचे द्युलोक में रहते हैं तथा दूसरे अन्तरिक्ष और पृथिवी में रहते हैं । वे दोनों देव हमारे लिए स्वीकार करने योग्य, बहुत प्रकार के, अन्नादि से पूर्ण, पुष्टिकारक ऐश्वर्य प्रदान करें तथा पशु धन भी दें॥४॥

विश्वान्यन्यो भुवना जजान विश्वमन्यो अभिचक्षाण एति ।
सोमापूषणाववतं धियं मे युवाभ्यां विश्वाः पृतना जयेम ॥५॥

हे सोम तथा पूषा देवो ! आप में से एक ने समस्त संसार को उत्पन्न किया है तथा दूसरे देव सम्पूर्ण संसार का पर्यवेक्षण करते हुए जाते हैं । हे सोम तथा पूषा देवो ! आप हमें सद्बुद्धि प्रदान करते हुए हमारे कर्मों की रक्षा करें । आपकी मदद से हम शत्रु सेना पर विजय प्राप्त करें॥५॥

धियं पूषा जिन्वतु विश्वमिन्वो रयिं सोमो रयिपतिर्दधातु ।
अवतु देव्यदितिरनर्वा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥६॥

समस्त विश्व को तृप्त करने वाले पूषादेव हमारी बुद्धियों को सन्मार्गगामी बनायें । ऐश्वर्यपति सोमदेव हमें धन प्रदान करें । अनुकूल व्यवहार करने वाली (देवों की माता) अदिति हमारी रक्षा करें । हम सुसन्तति युक्त होकर यज्ञ में आपका यशोगान करें॥६॥

सूक्त ४१

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- १-२ वायु; ३ इन्द्रवायु, ४-६ मित्रावरुणौ, ७-९ आश्विनौ , १०-१२ इन्द्र, १३-१५ विश्वेदेवा, १६-१८ सरस्वती, १९-२१ द्यावापृथ्वी ।
छंद- गायत्री, १६-१७ अनुष्टुप, १८ बृहती

वायो ये ते सहस्रिणो रथासस्तेभिरा गहि ।
नियुत्वान्त्सोमपीतये ॥१॥

हे वायुदेव ! आप अपने घोड़ों से युक्त हजारों रथों से सोम पान करने के लिए आयें॥१॥

नियुत्वान्वायवा गह्ययं शुक्रो अयामि ते ।
गन्तासि सुन्वतो गृहम् ॥२॥

याज्ञिकों के पास नियुत (रथ) में सवार होकर पहुँचने वाले हे वायुदेव ! आपके निमित्त यह देदीप्यमान सोमरस तैयार किया गया है । इस हेतु हम आपका आवाहन करते है॥२॥

शुक्रस्याद्य गवाशिर इन्द्रवायू नियुत्वतः ।
आ यातं पिबतं नरा ॥३॥

हे नेतृत्व प्रदान करने वाले इन्द्र और वायुदेवो ! आप आज घोड़ों से युक्त होकर गौ का दूध मिला हुआ तेजस्वी सोमरस पीने के लिए आयें और पान करें॥३॥

अयं वां मित्रावरुणा सुतः सोम ऋतावृधा ।
ममेदिह श्रुतं हवम् ॥४॥

यज्ञ को बढ़ाने वाले हे मित्र और वरुणदेवो ! उत्तम रीति से तैयार एवं शुद्ध किया गया यह सोमरस आपके निमित्त प्रस्तुत है । हमारी यह प्रार्थना सुनें॥४॥

राजानावनभिद्रुहा ध्रुवे सदस्युत्तमे ।
सहस्रस्थूण आसाते ॥५॥

आपस में कभी द्रोह न करने वाले हे तेजस्वी मित्र और वरुण देवो ! हजार स्तम्भों पर स्थिर, सशक्त, श्रेष्ठ यज्ञ मण्ड़प में आप विराजें॥५॥

ता सम्राजा घृतासुती आदित्या दानुनस्पती ।
सचेते अनवह्वरम् ॥६॥

सम्राट् रूप, घृताहुति स्वीकार करने वाले, दानशील अदिति पुत्र मित्र और वरुणदेव, कुटिलता से रहित (सरल हृदय वाले), साधकों याजको) की ही सहायता करते हैं॥६॥

गोमद्वू षु नासत्याश्वावद्यातमश्विना ।
वर्ती रुद्रा नृपाय्यम् ॥७॥

हे अश्विनीकुमारो ! हे सत्य सेवी रुद्रदेवो ! जिस सोमरस का पान यज्ञ में नेतृत्व प्रदान करने वाले लोग करेंगे, उस सोमरस को गौओं तथा अश्वों से युक्त रथ में आप भली-भाँति लायें॥७॥

न यत्परो नान्तर आदधर्षद्वृषण्वसू ।
दुःशंसो मर्त्यो रिपुः ॥८॥

हे धनवर्षक अश्विनीकुमारो ! समीप में रहनेवाले या दूर रहने वाले कटुभाषी शत्रु जिस धन को नहीं चुरा सकते, उसे हमें प्रदान करें॥८॥

ता न आ वोळ्हमश्विना रयिं पिशङ्गसंदृशम् ।
धिष्ण्या वरिवोविदम् ॥९॥

हे उत्तम स्तुति के योग्य अश्विनीकुमारो ! आपके पास जो सुवर्णयुक्त नाना प्रकार का ऐश्वर्य हैं, वह धन हमारे लिए ले आये॥९॥

इन्द्रो अङ्ग महद्भयमभी षदप चुच्यवत् ।
स हि स्थिरो विचर्षणिः ॥१०॥

युद्ध में स्थिर रहने वाले विश्वद्रष्टा इन्द्रदेव महान् पराभवकारी भय को शीघ्र ही दूर करते हैं॥१०॥

इन्द्रश्च मृळयाति नो न नः पश्चादघं नशत् ।
भद्रं भवाति नः पुरः ॥११॥

यदि इन्द्रदेव हमें सुखप्रदान करेंगे, तो हमें पाप नष्ट नहीं कर सकता, वे हर प्रकार से हमारा कल्याण ही करेंगे॥११॥

इन्द्र आशाभ्यस्परि सर्वाभ्यो अभयं करत् ।
जेता शत्रून्विचर्षणिः ॥१२॥

शत्रुविजेता, प्रज्ञावान् इन्द्रदेव सभी दिशाओं से हमें निर्भय बनायें॥१२॥

विश्वे देवास आ गत शृणुता म इमं हवम् ।
एदं बर्हिर्नि षीदत ॥१३॥

हे सम्पूर्ण देवगणो ! आप इस यज्ञ में आकर कुश के आसन पर विराजमान हों तथा हमारी इस प्रार्थना को स्वीकार करें॥१३ ॥

तीव्रो वो मधुमाँ अयं शुनहोत्रेषु मत्सरः ।
एतं पिबत काम्यम् ॥१४॥

हे सम्पूर्ण देवगणो ! पवित्रता प्रदान करने वाले इस यज्ञ में आनन्ददायी, तीक्ष्ण तथा मधुर सोमरस आपके निमित्त तैयार किया गया है, आप सभी आयें तथा इच्छानुसार इस सोमरस का पान करें॥१४॥

इन्द्रज्येष्ठा मरुद्गणा देवासः पूषरातयः ।
विश्वे मम श्रुता हवम् ॥१५॥

जिन मरुद्गणों में सर्वश्रेष्ठ इन्द्रदेव हैं, जिन्हें पोषण देने वाले पूषादेव हैं, वे मरुद्गण हमारी प्रार्थना को स्वीकार करें॥१५॥

अम्बितमे नदीतमे देवितमे सरस्वति ।
अप्रशस्ता इव स्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि ॥१६॥

हे नदियों, मातृगणों, देवों में सर्वश्रेष्ठ माता सरस्वती ! हम मूर्ख बालकों के समान हैं; अत: हमें उत्तम ज्ञान प्रदान करें॥१६॥

त्वे विश्वा सरस्वति श्रितायूंषि देव्याम् ।
शुनहोत्रेषु मत्स्व प्रजां देवि दिदिड्ढि नः ॥१७॥

हे माता सरस्वती ! आपके तेजस्वी आश्रय में ही सम्पूर्ण जीवन-सुख आश्रित हैं, अतः हे माता ! आप पवित्र करने वाले यज्ञ में आनन्दित होकर हमें उत्तम सन्तति प्रदान करें॥१७॥

इमा ब्रह्म सरस्वति जुषस्व वाजिनीवति ।
या ते मन्म गृत्समदा ऋतावरि प्रिया देवेषु जुह्वति ॥१८॥

हे माता सरस्वती ! आप अन्न तथा बल प्रदान करके सत्य मार्ग पर चलाने वाली हैं, अत: देवों को प्रिय लगने वाले गृत्समद ऋषि द्वारा बनाये गये उत्तम स्तोत्र हम आपको सुनाते हैं; आप इन स्तोत्रों को स्वीकार करें॥१८॥

प्रेतां यज्ञस्य शम्भुवा युवामिदा वृणीमहे ।
अग्निं च हव्यवाहनम् ॥१९॥

हे मंगलकारी द्यावा – पृथिवि ! हव्यवाहक अग्निदेव के साथ आप दोनों का हम वरण करते हैं । आप हमारी प्रार्थना को स्वीकार करके यज्ञ में आयें॥१९॥

द्यावा नः पृथिवी इमं सिध्रमद्य दिविस्पृशम् ।
यज्ञं देवेषु यच्छताम् ॥२०॥

हे द्यावा – पृथिवि ! सुख के साधक तथा आकाश तक हमारी हवि को स्पर्श कराने वाले यज्ञ को आज आप दोनों देवों तक ले जायें॥२०॥

आ वामुपस्थमद्रुहा देवाः सीदन्तु यज्ञियाः ।
इहाद्य सोमपीतये ॥२१॥

परस्पर सम्बद्ध रहने वाली (द्रोह न करने वाली) हे द्यावा-पृथिवी देवियो ! आज इस यज्ञ में देवगण सोमपान के निमित्त आपके पास बैठे॥२१॥

सूक्त ४२

ऋषिः- गृत्समद (अंगीरसः शौन होत्रः पश्चयाद) भार्गवः शौनकः।
देवता- शकुन्तः । छंद- त्रिष्टुप

कनिक्रदज्जनुषं प्रब्रुवाण इयर्ति वाचमरितेव नावम् ।
सुमङ्गलश्च शकुने भवासि मा त्वा का चिदभिभा विश्व्या विदत् ॥१॥

जिस प्रकार मल्लाह नाख़ को चलाता है, उसी प्रकार उपदेश देने वाला शकुनि बार-बार उत्तम वाणी द्वारा प्रेरित करता है । हे शकुनि ! आप सबके कल्याण करने वाले हों । आपको कोई आक्रमणकारी शत्रु किसी भी प्रकार का कष्ट न दे॥१॥

मा त्वा श्येन उद्वधीन्मा सुपर्णो मा त्वा विददिषुमान्वीरो अस्ता ।
पित्र्यामनु प्रदिशं कनिक्रदत्सुमङ्गलो भद्रवादी वदेह ॥२॥

हे शकुनि (उपदेशक) ! आपको श्येन (दुष्ट व्यक्ति) न मारे और न ही गरुड़ पक्षी (बलशाली) तुम्हें मारे । कोई शस्त्रास्त्रधारी आपको न प्राप्त कर सके । दक्षिण दिशा (विपरीत परिस्थितियों में भी कल्याणकारी वचनों का ही यहाँ उच्चारण करें॥२॥

अव क्रन्द दक्षिणतो गृहाणां सुमङ्गलो भद्रवादी शकुन्ते ।

मा नः स्तेन ईशत माघशंसो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥३॥

हे शकुनि ! आप मंगलमय शब्दों को बोलने वाले हैं; अत: घर की दक्षिण दिशा में बैठकर भी कल्याणकारी प्रिय वचन बोलें । चोर तथा दुष्ट व्यक्ति हमारे ऊपर अधिकार न करें । सुसंतति युक्त होकर हम इस यज्ञ में आप को यशोगान करें॥३॥

सूक्त ४३

ऋषि:- गृत्समद (अंगीरस: शौन होत्र: पश्चयाद) भार्गव: शौनक:।
देवता- शकुन्त: । छंद- जगती, २ अतिशकरी अष्टिर्वा

प्रदक्षिणिदभि गृणन्ति कारवो वयो वदन्त ऋतुथा शकुन्तयः ।
उभे वाचौ वदति सामगा इव गायत्रं च त्रैष्टुभं चानु राजति ॥१॥

स्तोताओं के समान समय-समय पर अन्न की खोज करने वालों की तरह शकुनिगण दायीं ओर (सम्मानपूर्वक) बैठकर उपदेश दें । जिस तरह साम गायक गायत्री और त्रिष्टुप् छन्द से युक्त दोनों वाणियों का उच्चारण करता है, उसी तरह यह शकुनि उत्तम वाणी बोलते हुए सुशोभित होता है॥१॥

उद्गातेव शकुने साम गायसि ब्रह्मपुत्र इव सवनेषु शंससि ।
वृषेव वाजी शिशुमतीरपीत्या सर्वतो नः शकुने भद्रमा वद विश्वतो नः शकुने पुण्यमा वद ॥२॥

हे शकुनि ! आप उद्गाता की तरह सामगान करते हैं तथा यज्ञ में ऋत्विक् की भाँति स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं । जिस प्रकार बलशाली अश्व घोड़ी के पास जाकर शब्दनाद करता है, उसी प्रकार

हे शकुनि ! आप चारों ओर से हमारे लिए कल्याणकारक तथा पुण्यकारक वचन ही बोलें॥२॥

आवदँस्त्वं शकुने भद्रमा वद तूष्णीमासीनः सुमतिं चिकिद्धि नः ।
यदुत्पतन्वदसि कर्करिर्यथा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥३॥

हे शकुनि ! जिस समय आप बोलते हैं, उस समय हमारे कल्याण का संकेत करते हैं । जिस समय शान्त बैठते हैं, उस समय हमारी बुद्धि को सन्मार्ग की और प्रेरित करते हैं । उड़ते समय कर्करी बाजे (वाद्ययंत्र के समान मधुर ध्वनि करते हैं । हम सुसन्तति युक्त होकर इस यज्ञ में आपका यशोगान करें॥३॥

॥इति द्वितीय मण्डलं ॥